UNIVERSAL LIBRARY
OU_186083
UNIVERSAL LIBRARY

OUP—67—11-1-68—5,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81 B41B Accession No. G·H · 3541

Author बेढब बनारसी ·

Title बेढब की बानी · 1960·

This book should be returned on or before the date last marked below.

बेढब का बाना

बेढब बनारसी

प्रकाशक : प्रकाशन–विभाग

गयाप्रसाद एण्ड सन्स

धाकै विलास, सिटी स्टेशन रोड, आगरा

□

मुख्य विक्रय-केन्द्र :

गयाप्रसाद एण्ड सन्स, हॉस्पीटल रोड, आगरा
ओरियंटल पब्लिशर्स, परेड, कानपुर
पॉपुलर बुक डिपो, चौड़ा रास्ता, जयपुर
लॉयल बुक डिपो, पाटनकर बाजार, गवालियर
कैलाश पुस्तक-सदन, हमीदिया रोड, भोपाल
श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, गांधी मार्ग, अल्मोडा

□

पुस्तक का मूल्य :

५ रुपये

□

पुस्तक का संस्करण :

प्रथम, जुलाई १९६०

■

मुद्रक : जगदीश प्रसाद, एम० ए०
एज्यूकेशनल प्रेस, आगरा

कुछ और भी

कविता तो आप पढ़ेंगे। कुछ और भी पढ़ लीजिये। बानी और कुरबानी भारतीय संतों तथा नेतागणों की परम्परा रही है। कबीर से लेकर चना जोर गरम की बानियां आप सुनते आये है। मनोरंजन तो दोनो से ही होता है। इस संकलन में जो बानिया संगृहीत हैं उन्हे आपकी इच्छा है जिसके साथ चाहे रख दीजिये। यह संग्रह बनारस अथवा वाराणसी में जन्मा और आगरे में प्रकाश मे आया। एक अपनी ठंडाई के लिये विख्यात है तो दूसरा अपनी चाट के लिये। इन रचनाओं में दोनो का आनन्द मिलेगा। बाबा विश्वनाथ का फक्कड़पन और ताज की मधुरिमा। भले ही ताज की कला और शंकर की महिमा न मिले।

इस संग्रह की रचनाएं समय-समय पर लिखी गयी है। जिस समय जैसा मूड रहा उस समय वैसा लिख दिया गया। सुना है कि बड़े आदमियों के विचारों में तथा उनकी बातों में सादृश्यता नहीं रहती। स्थल-स्थल पर विरोध दिखायी देता है। इस मापदण्ड मे मुझमे भी आप महत्ता पायेंगे। इन रचनाओ का अभिप्राय न सुधार है न शिक्षा। केवल मनोरंजन और विनोद के लिये लिखी गयी है; और पाठकों का यदि मनोरंजन और विनोद हुआ तो इस आर्थिक कठिनाई के समय जो कागज और रोशनाई में व्यय हुआ वह सार्थक होगा।

कुछ लोग कविता में दर्शन खोजते है। यो तो तुलसीदास के अनुसार संसार में सभी कुछ सिया-राम-मय है और जिन विद्वानो ने रामचरितमानस में मार्क्स के सिद्धान्त ढूंढ़ डाले हैं वह इस संकलन की पंक्तियों में कही वेदान्त, कही साख्य, कही लोकायत की झलक देखे, कही राजनीति के सिद्धान्तो, कही सरकार की आलोचना की बानगी देखें तो देख सकते हैं। किन्तु वह सब कुछ भी लेखक का मंशा न रहा।

जिस धरातल पर आज कविता पहुंच गयी है वहां कभी न पहुंचा, न पहुंच सकता हूं। अनेक भारतीय तथा विदेशी विद्वानों ने कविता की अनेक परिभाषाएँ लिखी हैं।

आज वह सब कविता की तीव्र-गति के गति के पीछे पड़ गयी। आज की कविता बौद्धिक है। हास्य का आधार भी बुद्धि ही है। इसीलिये हास्य मनुष्य ही समझ सकता है वह भी मानव-मात्र नही। और यह सब रचनाएँ हास्य की हैं। यह मेरी राय है और मैं समझता हूं और लोगों की भी होगी। व्यंग को भी हास्य के ही दायरे में मानता हूं। इन रचनाओं में कही-कही व्यंग मिलेगा। वह आक्रोष अथवा ईर्ष्यावश नही लिखा गया है, इसका विश्वास दिलाता हूं, यदि साहित्यकार का विश्वास आप करते है।

अंत में मैं प्रकाशक को धन्यवाद देता हूं। मुझसे सकलन तैयार करा लेना उन्हीं का काम था; नहीं तो दस साल लग जाना तो साधारण बात होती। उनकी तकाजे की चिट्ठियां उसी प्रकार आती थी जैसे सूरज रोज उदय होता है। अन्त में मैंने सोचा कि छुटकारा पाना ही चाहिए। इस विलम्ब के लिये मेरा स्वास्थ्य भी उत्तरदायी है किन्तु स्वास्थ्य की चिंता डाक्टर को होती है, प्रकाशक को नही। प्रकाशक ने इसका रूप-रंग भी अच्छा दिया।

जुलाई १, १९६० **'बेढब' बनारसी**

नोट—पृष्ठ १०० पर पन्द्रहवी पंक्ति मे प्रथम सूत्र के स्थान पर प्रणय सूत्र पढ़िये।

विषय-सूची

अ

अरे तू भाग !	२१
अरे नही देखा हे तुमने कविजी को जो एककी हैं	३८
अरे समय क्या ठहर नही सकता तू क्षण भर	११५
असफलता बांध अटूट रहा	२३

आ

आओ प्रिये मनालें हम-तुम होली का त्योहार	११२
आओ रहैं बराबर साथी	८५
आओ संगिनी हम तुम मिलकर एक नया संसार बनायें	११०
आज तड़के श्रीमतीजी ने विलंपित ख्याल गाया	२६
आज भी हुए विधाता बाम	१३
आज यह निस्तब्ध कैसी रात है	६७
आज विजय की बेला	४५
आजं हृदय का सौदा कविता के द्वारा होता है	१२६

इ

इस जग की गति देख रह गया मैं पूरा भौचक्का	१२६

ए

एकदेखा बाग बेनिया में पड़ा	१७

क

कवि गीत सुनाओ आओ	१००
किस ओर कहा मैं जाऊं	२०
किस तरह निकले कहो अरमान	८४
कैसी बिछी चांदनी आज सड़क पर	६४
कोना-कोना मैंने ढूंढा रहने को कही मकान नही	१११
कौन तुम्हें अबला कहता है	४८
क्या हो तुम कुछ भी न समझ में मेरी अब तक आया	७४
क्यो मुझको देती हो गाली	८६
क्यों होती प्रिये विकल हो	२२

ख

खालो प्रिये चार बीड़े यह है काशी का पान	११४
खोपड़ी गंजी मनोहर चीज है	१२२
खोलो प्रिय घूंघट पट खोलो	

ग

गरज गरज सावन घन आये	११७
गरमी का भगवान के यहा से टूटा है कोटा	१०८
गया तुमसे हार	४६

घ

घर घरर-घरर मेरे सम्मुख बिजली का पंखा घूम रहा	८०

च

चशमा सुशोभित नैनवाले	१३२
चीनी की ख्याति हुई, पर	८२
चांदनी-से कलित कुतल, मुख प्रभात-शशांक	८

ज

जगाओ मत इतने तड़के	२६
जगत है माया ही माया	२८

जब शिशिर का मास आया ९८
जाग-जाग कर रैन बितायी ६१
जागो-जागो आया प्रभात ८७
जिस ओर जा रहे है हम लात खा रहे है १०२
जीवन में अब प्यार कहां है १८
जीवन में प्रगति अगर चाहो तुम अपना मार्ग बदल डालो ६८

ठ

ठंडक की है बलिहारी ७१

त

तुम कहते हो रोया न करो ७५
तुम प्रिये घरबार देखो ४१
तुम मुझे अपना बनालो ६३
तुम्हारी याद में मोती प्रिये बिखरा रहा हूं १०४

थ

था नवीन प्रभात आया ५२

न

नवयुग की दीपक माला है १२१
निज अलकों के अंधकार में तुम कैसे छिप जाओगे १२०

प

पश्चिम से हवा चली है ७६
पत्र लिखने जा रहा था ३६
पागल होता क्यों मन ४४
पावस का रसमय मास ३४
प्रार्थना मतकर, मतकर, मतकर १२
प्रभुजी रसना अगर न होती १०५
प्रियतम अब मुझे बचालो ४३

प्रियतम तुम चदन मैं पानी ३१
प्रियतम भविष्य का वादा क्या ६०
प्रियतम मैं सोया तुम पालक ११६
प्रिये मैं समता का हूं बंदा १२८
प्रिये तुम रेजगारी हो १६
पीड़ा के स्वर में मत गाओ ६१
प्रेम इसे कहते है ५७
प्रेम पैलाने वाली है ६५

ब

बडी लंबी वियोग की रात ४२
बहुत से खाट के खटमल १०३
बेढब हृदय को थाम लो ३६

भ

भाग्य देखो आ गयी वह आज मोटरकार लेकर ३०

म

मनाया बहुत पर उन्होने न माना ७७
मेंढक तू कितना महान है १३०
मैं कविता करने वाला हूं ५४
मैं क्यों कविता करता हूं ५६
मैं कैसे रोटी खाऊं ? १५
मैंने जब सुर्ती थी खायी १०६
मैं, देश प्रेम कैसा हो खूब जानता हूं ६०
मैं बड़ा भाग्य का खोटा ११८
मैं मानव कितना दुर्बल हूं ५६
मैं शाल ओढ़ कर चलता हूं ६६
मैं सीख रहा था बाइसिकिल ८८
मैंने सुबह नहाना चाहा ४०

य

यह घास का मैदान है ३२

यह चंचला-सी चाल ६२
यह जीवन की कठिनाई है ३३
यह बीमारों की बस्ती है, इसमे तुम रहना दूर प्रिये १०
यही है इस जीवन का मोल ३५

र

रिमझिम-रिमझिम वर्षा आयी ७६
रूपसि तू खरी परी-सी है ५८

व

वह तो है जैसे बिजली की लट्टू ५५
वह प्रेमी बन कर आये ११
वह संपादक बन गये आज ५०
वाह मसूरी, आह मसूरी ! ३

श

शारदे आज यह वर दे १

स

सखी री अब क्या गाऊं गान ७८
सत्य कहना हो कठिन बातें बनाना कब मना है ७०
सरदी हल्की पड़ रही ६३
सब है, सब है, सब है २५
सावन रिमझिम-रिमझिम आया १२४
सोला टोपी धन्य तुम्हारे गुण सब गाते है ७२

ह

हे हरि हरो उर की पीर ४७
है स्वर्ग पहुंचना सरल कठिनतम उन तक बेढब जाना है ६५
होता है मुझे विराग सखे ६

●

एक

शारदे आज यह वर दे

नैनों से भी तीखी तर हो
शिशुओं-सी सर्वथा निडर हो
व्यंग-विनोद-हास का घर हो
तुझ-सी ही हे देवि अमर हो

इस निब-वाली को मैं जैसा चाहूं वैसा कर दे

इसमें रंग भरा हो काला
किन्तु जगत में करे उजाला
जहां बनज हो रोने वाला
वहां गिरे यह बन कर पाला

झाड़े यह पाखंड-दंभ के तने हुए जो परदे

जैसी टेढ़ी अलकें काली
मानो ऐंठी कोई व्याली
हो यह टेढ़े शब्दों वाली
किन्तु नहीं हो विष की प्याली

इससे सुधा सरस बरसा अधरों पर सबके धर दे

भरा रहे रत्नाकर इसमें
रस का भर दे सागर इसमें
पायें लोग चराचर इसमें
मस्ती के हों आखर इसमें
जग को कर दे मादक, इसमें वह मादकता भर दे

चूमे क्षितिज और अंबर को
नक्षत्रों के लोक प्रवर को
करे पराजित यह निर्झर को
छू ले मानव के अन्तर को
उड़े कल्पना के समीर पर इसको ऐसा पर दे

मूर्ख मनुज की वाह-वाह से
बिना हृदय वाली निगाह से
पैसों की स्वादिष्ट चाह से
इन तीनों सागर अथाह से
इक्यावन नंबर वाली यह पार, पारकर कर दे

१-१-४८]

दो

वाह मसूरी, आह मसूरी[1] !

शैल शृंग में सबसे न्यारी, नगपति की तू राजदुलारी
प्रकृति-वधू की अनुजा प्यारी, मोहित जिसपर हैं नर-नारी
तेरी सुन्दरता की उड़ती है जग में अफ़वाह मसूरी

शिखर खड़े नभ के विराम को, सीढ़ी मानो स्वर्ग-धाम को
घन-शावक जिसके वक्षस्थल पर करते विश्राम शाम को
नीचे खड्ड प्रणय से गहरे मिले न जिसकी थाह मसूरी

अभी धूप अब घन है छाया, कमरों में बादल घुस आया
अंक सदृश प्रियतम के शीतल किस ब्रह्मा ने तुझे बनाया
है निदाघ-सी धूप किन्तु है कितनी शीतल छांह मसूरी

नव मानव की सृष्टि यहां है, अपने में वह मस्त जहां है
दुख-चिन्ता-पीड़ा मत पूछो इसका यहां निवास कहां है
शीतलता का शिखर यहां है, भव का यहां न दाह मसूरी

१—वाह जब पहुँचे तब, और आह लौटते समय की प्रतिध्वनि है।

सुन्दर दृश्य, शैल हैं सुन्दर, सुन्दर मग, सुन्दर सिनेमाघर
फल सुन्दर, तरकारी सुन्दर, पग-पग पर नर-नारी सुन्दर
बस जाता मैं यहीं हुआ होता यदि नहीं विवाह मसूरी

काबा यही, यही काशी है, प्रकट यहीं पर अविनाशी है
अलका है, अलकों के भीतर प्रतिदिन जहां पूर्णमासी है
सुन्दरता की पूजा की है दर्शनीय दरगाह मसूरी

कोई चलता शाम-सबेरे, कोई है सिनेमाघर घेरे
इंतिजार में कुलरी से लंधौर लगाता कोई फेरे
कोई रटता उसे भेज दे इस दम या अल्लाह मसूरी

तरल रजत कैंपटी प्रपात है, जिसकी महिमा बस हठात है
अभिनव कवि-सा निशि-दिन रोनेवाला जिसका क्षीण गात है
हां, सुनते हैं बहुत दूर से इसकी करुण कराह मसूरी

टहल रही है मुसलिम बाला, बुरके से ढँक आनन आला
कभी खोलकर मुख का घट ढुलका देती फारस की हाला
उसे देख जी में आता कर लेते एक निकाह मसूरी

सिंधी नैन कहीं मदमाते, अंग-अंग सौ-सौ बल खाते
मखमल के, रेशम के, साटन के सलवार जहाँ लहराते
जिन्हें निरख कर पथिक भूल जाते हैं घर की राह मसूरी

है किताबघर हृदय यहां का, वर्णन संभव नहीं जहां का
चंचलता, रोमान्स, मधुरिमा, बांकी चितवन, सजधज बांका
देख-देख छवि इन्द्रपुरी को होती होगी डाह मसूरी

थल-थल पर मद में नर-नारी, सुन्दर सूट, हृदय-कट सारी
अजब अदा से मस्त घूमते जैसे एक सृष्टि हो न्यारी
जो आते हैं यहां समझते हैं अपने को शाह मसूरी

फोकस कर दो दृष्टि जहां हो, सुंन्दरता की सृष्टि जहां हो
छक कर पान कंठ तक कर लो मादकता की वृष्टि जहां हो
रस का यहां बहा करता है अविरल एक प्रवाह मसूरी

ऐसी लिपस्टिक कहीं लगी है, आग कोयले में सुलगी है
और चाशनी पौडर की चेहरे पर उनके खूब पगी है
झलक रहा हो चाहे जामुन का सा रंग सियाह मसूरी

रिक्शा पर जब जोड़ी चलती, जो एकाकी उनको खलती
मेरे कवि की तरल तबीयत देख उन्हीं को रही बहलती
मुझको मिली न ऐसी संगिनि, यही रह गयी चाह मसूरी

"वैभव का है यहाँ उजाला, धन का बहता यहां पनाला
कुछ हफ्तों में साधारण जन का निकलेगा यहां दिवाला
यहाँ ग़रीबों का तब कैसे होता है निर्वाह मसूरी

होटल बिखरे रत्न जड़े-से, जाते जहां लोग तगड़े-से
भूख-प्यास सब मिट जाती है बच जाते हैं सब झगड़े-से
पाकिट से परिपूर्ण रूप से हो जब बेपरवाह मसूरी"

एक मास तेरे संग काटा, तोंद हुई कद्दू से भांटा
कितने अरमानों को ढोते लिये हृदय में अपने काटा
कालिज खुला चले हम काशी, फिर किस्सा कोताह मसूरी

३०-६-४१]

तीन

" होता है मुझे विराग सखे

तीस साल घोटी अंग्रेजी ले चॉसर से हडसन
सोचा था बन जाऊंगा मैं शेली, कीट्स या मिलटन
समझ न पाया पी० यू० टी० पुट क्यों बी० यू० टी० बट है
आज पता चलता है जीवन पूर्ण हुआ चौपट है
जी में आता अब बेचूं सोया-पालक का साग सखे

सोचा था आइ० सी० एस० के पथ पर मैं अगर न सरका
पी० सी० एस० तो खेल तनिक है मेरे बायें कर का
पबलिक सरविस कमीशन के जो एक नये मेंबर हैं
मेरे चाचा के साले की लड़की के देवर हैं
मगर किया व्यवहार उन्होंने जैसे हो बुलडाग सखे

बनते है वकील ही लीडर, समझ, गया ला कालिज
मगर वकालत पर मेरी गिर पड़ी भयंकर फ़ालिज
जीवन से मैं थका कूदने को कूएँ में दौड़ा
भीड़ मिल गयी लिये हाथ में हंसिया और हथौड़ा
बोली बनना अगर लेनिन हो आओ घर से भाग सखे

बना कामरेड, भाषण झाड़े, हड़तालें करवाईं
महिलाएँ भी सुन्दर-सुन्दर संग हमारे आईं
नहीं बनाया किन्तु किसी ने मुझे देश का नेता
रेती में रह गया तरी जीवन की अपने खेता
इनक़िलाब जिन्दा हो केवल गाता हूँ यह राग सखे

दौड़ा गया बम्बई बनने को फिल्मी अभिनेता
सोचा खूब उड़ाऊंगा वैभव का वहां परेता
जहां तारिका जगमग दिलको बहलायेगी मेरे
रुपयों की थैली चरणों को सहलायेगी मेरे
वहां बोतलों के कितने ही खोले मैंने काग सखे

हंसते हैं सब मुझ पर सबको देख-देख रोता हूं
आज निराशा की पंछी का बेढब मैं खोता हूं
लगा भूत तब पड़ा फेर में परियों के हतभागा
भिक्षुक बन कर बिना टिकट मैं तुरत वहां से भागा
गिनता हूँ अब प्रातः सायं अपने दिल के दाग सखे

१०-१२-४१]

चार

गतयौवना प्रेयसी

चांदनी-से कलित कुंतल, मुख प्रभात-शशांक
है अधर अब शुष्क जैसे आम की हो फाँक
नैन हैं हो गये थानेदार पेंशन-प्राप्त
आज अधरों में प्रवालोंका न वर्णन आप्त

प्रेम का पहला नहीं प्रज्वलन कुछ भी शेष
फ्यूज़ जैसे बल्ब बिजली का पड़ा अवशेष
है कहां साहस हृदय में वह प्रिये प्राचीन
हो गयी हो शृंगिणो जैसे विषाण-विहीन

स्निग्ध कोमल देह थी अनुपम अमल अवदात
पोलसन नवनीत-सा अब पीत है वह गात
नैन मधुप जहां फिसलते थे वही मुख-कंज
हो गया हेमंत से चालीस, अब स्पंज

कंठ कोकिल कलित जो देता कलेजा काट
है हवाई आक्रमण के बिगुल का सम्राट
तरुण मानस ऊर्मियों-सी चारु चंचल चाल
मंद है, अब नव बधू जैसे चले ससुराल

"सूक्ष्म छायावाद-सी अस्पष्ट थी जो लंक "
हो रहा सम्मुख उसी के आज पीपा रंक
स्पर्श से होती जहां थी तड़ित की झंकार
एक क्षण में विफल हो जाता हृदय-संसार

आज वह तन शांत रस है बन गया साकार
उष्णता का रक्त में होता नहीं संचार
चंचला-सी कौंध जाती जो कभी मुसकान
ज्योति वह खद्योत-सी अब हो गयी है म्लान

बीत जाती बात करने में जहाँ दिन-रात
अब समझ में ही नहीं आता करूं क्या बात
स्नेह की तुम एक रेखा थीं, हुई शहतीर
प्रिये, तुम तो हो गयी उबला हुआ ज्यों नीर
प्रिय-प्रवास समान जिसका वर्ण-रूप महान
पारिजात समान सूखे, आज वह बेजान

२०-२-४२]

पाँच

यह बीमारों की बस्ती है, इससे तुम रहना दूर प्रिये
दिल थाम-थाम कर बैठ गये हैं यहां सभी मजबूर प्रिये

कोई आँखों का रोगी है, उसका है हाल विचित्र प्रिये
खूँटी सी हैं आँखें, लटका जिनमें प्रियतम का चित्र प्रिये

इनको प्रियतम की आँखें, आँखों सी न दिखायी देती है
इनको वह बरछी, भाला, खंजर, खुखड़ी, आरी रेती, है

कहने को तो इस बस्ती में बस दिल ही वाले रहते हैं
पर हैं वे ही जो औरों को दिल किये हवाले रहते हैं

कुछ लोग यहां हैं तारे गिनने का अभ्यास किया करते
कुछ लोग प्यास लगने पर हैं अपना ही रुधिर पिया करते

ओसों में आंसू, बिजली में यह हंसी देखते रहते हैं
इनका है ढंग अनोखा दुख नीरव भाषा में कहते हैं

२४-७-४२]

छः

वह प्रेमी बनकर आये

" काले सिर पर लोशन डाले, लम्बे केश लहरते
नीलगिरी पर चंदन-बन में भैंसे जैसे चरते
रजत कटोरी में अफीम-सा, अंजन आंख लगाये

दाढ़ी मूंछ बिना आनन, मरुथल जैसे बे पौदा
भीमकाय पर छोटा सिर जैसे हाथी पर हौदा
सुरखी की पगडंडी-सी अधरों में पान रचाये

आज प्रेयसी ने मिलने का उनको बचन दिया है
फूले हैं प्रसन्न हो जैसे नया भरा तकिया है
अथवा अजा उदर में अपने शावक चार छिपाये

धीरे-धीरे पग रखते जैसे रेती पर कछुआ
ताक रहे हैं ऐसे जैसे मछली को हो मछुआ
हिलता है शरीर जैसे लंकिनी लंक लचकाये

१५-८-४२]

सात

" प्रार्थना मत कर, मत कर, मत कर

ह्विस्की, ठर्रा, ताड़ी केवल
पीता चल तू अविचल प्रतिपल

गोबर गर्त बीच गिर जा फिर गिर जा तू उठ-उठ कर

मंदिर, मठ, मसजिद, गिरजाघर
मनुज पराजय रहे व्यक्त कर

जय का एक प्रतीक–बदलना बीबी का है सत्वर

झुकती है बस पशु की गर्दन
पाया तूने मानव का तन

केवल झुक यदि कहीं दृष्टिगोचर हों महिला सुन्दर
और किसी के सम्मुख है झुकता तो तू है कायर

२१–१२–४२]

आठ

आज भी हुए विधाता बाम
भोज दिये, डालियां लगायी तनिक न निकला काम

साहब का दर्शन करता, संध्या बंगले पर होती
उन्हें प्रसन्न किया, पहना पतलून, छोड़ दी धोती
बंगले को ही समझा था मैंने अब तक सुर-धाम

टाइटिल पानेको मैंने खोला रुपयों का थैला
मैं मजनूं बन गया बन गयी टाइटिल मेरी लैला
किन्तु गजट में नये साल में कहीं न निकला नाम

टाइटिल के पीछे कहते हैं लोग मुझे दीवाना
इसीके लिये भोज दिये मैंने कितने सालाना
मछली भेजी, मेवे भेजे, भेजे लंगड़े आम

मोटर मंगनी में दी, निज कोठी में नाच कराया
भूरि-भूरि कितने जलसों में उनका ही गुन गाया
उनकी ही सेवा में रत था शीत लगे या घाम

मेम साहिबा के कुत्ते को जाकर गोद खिलाता
दौड़-दौड़ कर बाज़ारों से सौदा उनका लाता
किया उन्होंने मुसकानों में केवल काम तमाम

अच्छा नया वर्ष आयेगा फिर भी अगले साल
आशा की डोरी से फिर से बीनूंगा मैं जाल
तब तक फेरूंगा टाइटिल की माला आठो याम "

[अँग्रेजी शासन में टाइटिल के लिए कुछ लोग सब कुछ अर्पण कर देते थे । अब स्वतन्त्र भारत में पुनः यह रोग फैल रहा है]

२६-१२-४२]

नौ

मैं कैसे रोटी खाऊं ?

गेंहूं जितना था घर में
धीरे-धीरे सब खाया
चोरी-चोरी से रुपये
का डेढ़ सेर भी लाया

लेकिन अब कहीं न मिलता काशी, मद्रास, कुमाऊं

जब भूख भरी आंतों को
ले रजनी में सो जाता
सपने में देख रसोई
रोटी-रोटी चिल्लाता

डर है न कहीं निद्रा में जंफर उनका खा जाऊं

कक्षा में कभी पढ़ाते
है रोटी याद आ जाती
पुस्तक के पन्ने लगते
हैं जैसे मुझे चपाती

जी होता उनको रोटी-रोटी ही रोज पढ़ाऊं

जब 'भूर्भुवः स्वः' कह कर
गायत्री मैं जपता हूं
रोटी का रूप विशद मैं
सम्मुख अपने रखता हूं

क्षमता हो मुझमें तो मैं रोटी का मंत्र बनाऊं

था पढ़ा कौमुदी में है
होता 'अदर्शन लोपः'
गेहूं का हुआ अदर्शन
'भइया अब गेंहूं–रोपः'

मैं घूम-घूम कर भारत को यह संदेश सुनाऊं

सरकार बधाई तुमको,
कर दिया प्राण रोटी में
है ध्यान धंसा रोटी का
सबकी बोटी-बोटी में

गेहूं खोजूं या कविता लिखने पर ध्यान लगाऊं

१–१–४३]

दस

एक देखा बाग बेनिया में पड़ा
रेशमी रूमाल, जिसको मैं खड़ा
था निरखता, हृदय मेरा लड़खड़ा
पास उसके इस तरह आकर अड़ा;

जिस तरह उर्वर जगत की भूमि पर
हैं धंसाते आंख यूरोप के प्रवर
राजनीतिक, और लेते हड़प कर।
रंग ऊषा ने दिया उसको उधार

सेंट से भींगा हुआ था तार-तार
एक कोने में लिखा था 'गुलबहार'।
ले लिया मैंने बचा करके निगाह
हाथ उर पर और करता आह-आह

प्रेम का जो चिन्ह मुझको मिल गया
दूसरे दिन वहीं देखा एक रूप
उसी का रूमाल था—दिल खिल गया

५–१–४३]

ग्यारह

जीवन में अब प्यार कहां है
वीणा तो है, झंकृत करने वाला उर का तार कहां है

टेबुल पर है चित्र हमारे, देख रहा हूं मैं मन मारे
सुधा घोल देने वाला अधरों का अब उपचार कहां है

'आज' वही संसार वहीं है, देशदूत है, है लीडर भी
नैनों में ही पढ़ लूं दिल की खबरें वह अख़बार कहां है

मंत्री कहीं प्रधान कहीं हूं, उपमा हूं उपमान कहीं हूं
जिसकी फटकारें भी सुख दें, ऐसा मधुर दुलार कहां है

७-१-४३]

बारह

प्रिये तुम रेज़गारी हो

नहीं होता कभी दर्शन, उजाला हो तिमिर या घन
शिशिर हो, ग्रीष्म हो, ऋतुराज की आती सवारी हो

निशा में तुम दिवाकर हो, अमा की तुम सुधाकर हो
हृदय उद्यान में गूलर-सुमन की तुम कियारी हो

अदृष्टा ब्रह्म-सी हो तुम, कि कोई जर्म-सी हो तुम
बताओ भेंट मुझसे भांति किस प्रियतम तुम्हारी हो

प्रतिज्ञा ठीक लंदन की, जलन हो तीव्र चंदन की
मगर है ज्ञात इतनी बात, तुम प्रियतम हमारी हो

१५-१-४३]

[उस समय देश में रेज़गारी का मिलना दुर्लभ हो गया था]

तेरह

किस ओर कहां मैं जाऊं

घर में बेटी रोती है रसगुल्ला मुझको ला दो
उसकी मां के नैनों में घिर आया सावन भादों
कहती है बढ़िया साड़ी होली में एक मंगा दो
कलदार कहां से लाऊं, किस ओर कहां मैं जाऊं

कालेज़ में लड़के रोते हैं कोर्स न पूरा होता
नोटों की माला यद्यपि प्रतिदिन मैं रहा पिरोता
रट-रट कर जिसको बालक प्रत्येक बना है तोता
पुस्तक क्या भला पढ़ाऊं, किस ओर कहां मैं जाऊं

कवि सम्मेलन में पहुंचा जिससे जी बहले थोड़ा
देखा सारे कवियों के उर का फूटा है फोड़ा
अज्ञात कामिनी के कर का खाया सबने कोड़ा
वह रोते म्याऊं म्याऊं, किस ओर कहां मैं जाऊं

२६-२-४३]

चौदह

अरे तू भाग !

चारों ओर अंधेरा पथ पर
भूंक रहा है पागल कुक्कुर
पीछे आता कौन
भूत का होता भान
निकलने वाले हैं अब प्रान

अरे तू भाग !

" पुलिस समझती तुमको तस्कर
तू लेकिन बनता है कविवर
बड़ा होगा तेरा उपहास
अगर खुल जायेगा इतिहास
पड़ेगी तब डंडों की मार
तुझे समझेंगें सब बटमार

अरे तू भाग !

३-४-४३]

●

पन्द्रह

क्यों होती प्रिये विकल हो

मैं प्रेमी, तुम इस शताब्दी की सुन्दर मॉडल हो

"मिलता नहीं मिलै मत गेंहूं
प्रेम-तरी है तुम हो मैं हूं

जीवन सागर पार करेंगे चाहे ज्वार प्रबल हो

मंद-मंद मुस्कान तुम्हारा
बस भर देगा पेट हमारा

चाहे घर में तनिक न मेरे रोटी या चावल हो

वह कंट्रोल करें गेंहूं पर
वह कंट्रोल करें दुनियां पर

तुम पर हो कंट्रोल हमारा, तुम मेरा संबल हो

१६-४-४३]

सोलह

असफलता बांध अटूट रहा
सच कहता हूं प्रेमी न बनो
है प्रेम निराशा का स्वरूप
इसका बेढब ताना न तनो

मैं विजय एक डग पा न सका
बरसों में प्रणय-युद्ध का—
यद्यपि बड़ा वीर रंगरूट रहा

था निकट न लेकिन निकट हुआ
उनकी आंखों में मुहर लगा सा
एक पुराना टिकट हुआ

चरणों तक उनके जा सका
यद्यपि मैं सदा समझता
अपने को उनका बस बूट रहा

था प्रेम-गगन में मंडराता
इच्छा होती उनकी तो, ध्रुव
को तोड़ धरा पर मैं लाता

अपने मनसे उनको मापा
लालच में कुछ पा जाने के–
उलझा-सा पैराशूट रहा

२५–४–४३]

सत्तरह

सब हैं, सब है, सब है
तू पास हमारे जब है

नित नव-नव शृंगारों में
सुषमा के आगारों में
ले स्नेह भरा उर जैसे
विज्ञापन अख़बारों में

मुझको तू ऐसी भाती
मानो अमृत का टब है

"कंपन उर में होती है
निज बुद्धि अलग सोती है
साधना पूर्व जीवन की
अपने में ही खोती है"

तेरा व्यक्तित्व उजाला
तू तो बिल्कुल बेढब है

७-५-४३]

अठारह

जगाओ मत इतने तड़के
मुझे थोड़ा तो सोने दो
कल्पना के कोमल पौधे
मुझे सपने में बोने दो

गिर रही हैं नन्हीं बूदें
गगन में है बादल छाया
शाम को कल ही भोजन एक–
जगह डट कर मैंने खाया

रहा कलकत्ते का संदेश
तथा रसगुल्ला था रसदार
भाजियां आठ भांति की, भिन्न
चटनियां कितनी और अचार

पूरियां गेंहूं की थी शुद्ध
मुलायम भोजन वाली गोल
कलित कामिनियों के जिस भांति
अरुण लज्जा से स्निग्ध कपोल

मुझे थी केवल दस की भूख
और उदरस्थ हुई पच्चीस
लहर सी उठती है कुछ हूक
उदर मेरा है बना नदीश

मलाई की कुलफ़ी का ढेर
और काशी के लंगड़े आम
लगाया हाथ न की कुछ देर
दशानन पर टूटे ज्यों राम

११-७-४३]

उन्नीस

जगत है माया ही माया

रूपवती तरुणी को देखा डोरा उस पर डाला
अपने हृदय-नीड़ में बरबस उस पक्षी को पाला
पाप किया क्या, कैसी तरुणी, वह तो केवल छाया

इधर-उधर से रुपये लाया उससे मौज उड़ायी
लौटाने को एक नहीं लौटाई मैंने पाई
रुपया तो है ठिकरा उसने मूल्य कहां से पाया

मिथ्या ही मिथ्या जगती है सत्य कहां फिर पाऊं
सत्य बोलकर फिर जीवन में कष्ट अनेक उठाऊं
झूठा जग है, झूठा जीवन, झूठी है यह काया

१६-७-४३]

बीस

आज तड़के श्रीमतीजी ने बिलंपित ख्याल गाया

दौड़कर भागी बिलाई, घुस गये चूहे बिलों में
एक धड़कन-सी उठी जो सुन रहे उनके दिलों में

द्वार पर मेरे उमड़ता एक विकट समूह आया

लगी प्रश्नों की झड़ी, गत हो गया कोई बताओ
वेदना गंभीर हो तो डाक्टर को झट बुलाओ

जान पड़ता है किसी पर भूत का पड़ गया साया

लोग मुझसे कह रहे थे—आप तो हैं शिष्ट व्यक्ति
पीटने में एक महिला के लगाते आप शक्ति

आप लड़ते हैं मगर सारा मुहल्ला सो न पाया

लाज से मैं गड़ गया, बोला पुनः गम्भीरता से
यह रहस्य बता दिया मैंने बड़ी ही वीरता से—

मार पीट हुई नहीं है, श्रीमती ने ख्याल गाया ''

२३-७-४३]

●

इक्कीस

भाग्य देखो आ गयीं वह आज मोटरकार लेकर

तीस है तारीख वेतन खर्च सारा हो गया है
दे अगर जलपान हलवाई उधार, उसकी दया है
है तमोली सामने घर के, मगर बदमाश पूरा
मांगता सम्मुख सभी के दाम, ऐसा बेहया है

किस तरह उनसे मिलूं मैं, कौन सा उपहार लेकर

जल बहुत है, पास लेकिन चाय का प्याला नहीं है
कौन चीनी को कहे गुड़ भी यहां काला नहीं है
आज हलवा भी बनाने का नहीं सामान कोई
वह हमारा हाल क्या समझें जिन्हें ठाला नहीं है

क्या करूं ऐसे समय मैं प्रेम का संसार लेकर

धोतियां दो थीं उन्हें कल ले गया धोबी समेटे
सामने किस भांति जाऊं इस तरह लुंगी लपेटे
द्वार पर वह हैं बुलालूं, पर बुलाऊं किस तरह मैं
दे रहीं हैं प्रेम की सागर तरंगे यों झपेटे

मिलन की देवी खड़ी, विच्छेद का उपचार लेकर

३०-७-४३]

बाईस

" प्रियतम तुम चंदन में पानी
मेरे रोम-रोम में तुम हो बसी हुई हे रानी !

लूट लिया मेरा दिल जैसे दिल्ली को दुर्रानी
मैं हूं सीमाप्रांत और तुम हो तस्कर अफ़गानी

कहते लोग प्रेम करना है जीवन की नादानी
मुझको तो दी इसी प्रेम ने है पीड़ा मस्तानी

जब स्मृतियों के बम बरसाता वीर प्रणय-सेनानी
उसी जलन में सुख सरिता की होती प्रिये रवानी

मेरे चारों ओर तुम्हीं हो, हे मेरी कल्यानी
कटि के चारों ओर जिस तरह लंहगा राजस्थानी "

२-८-४३]

तेईस

यह घास का मैदान है
फैला हुआ है सृष्टि-सा नयनाभिराम महान है

बाहन मसीह महान के दिन में टहलते घूमते
संध्या समय कोमल पदों के डग इन्हें हैं चूमते

इसमें प्रातिध्वनियां छिपी हैं प्रेम के आलाप की
इसमें प्रतिज्ञाएं छिपी हैं प्रेमियों के बाप की

प्रत्येक पत्ती में कहानी निहित है रोमांस की
प्रत्येक जड़ है कह रही कुछ बात खोए चांस की

मजनूं अनेकों गिन चुके हैं लेटकर तारे यहां
फ़रहाद कितने चप्पलों से हैं गये मारे यहां

यह प्रेमियों के नैन-जल से है सदा सींचा गया
किस-किस सुनहले चित्र का ख़ाका यहां खींचा गया

३-६-४३]

चौबीस

यह जीवन की कठिनाई है
संसार हथौड़ा सा बेढब सिर अपना बना निहाई है

है बंद अजायबघर में घी, मक्खन ब्रज की कविता में ही
पय तो पय ही है उसका क्या, अब रुपये पाव मलाई है

है एक ब्लेड दो आने का, लालच उनसे मिल आने का
नित नहीं पहुंचता, प्रातः मेरे घर पर कोई नाई है

उनके घर भीड़ बड़ी रहती, युवकों की है सरिता बहती
कोई फिनले पहने या पहने सूट बूट नेकटाई है

कितना भी संभल-संभल चलिये, दिल को समझाते भी रहिये
यह तुरत फिसल ही जाता है सुंदरता ऐसी काई है

स्वर की लहरी फैलाता है, फिर लचक-लचक बल खाता है
कवि सम्मेलन में इस युग का कवि बना जानकीबाई है

१७–६–४३]

●

पच्चीस

पावस का रसमय मास—
मैं एकाकी छोड़ रहा हूं उलटी आज उसास
रिमझिम-रिमझिम बूंदे गिरती नहीं टूटता तार
अभिनव प्रेमी मानो लिखता है उर के उद्गार
सन-सन-सन-सन पवन चल रहा द्रुम के कंपित गात
दिन में ही है आज हुई जाती अंधियारी रात
स्मृति के गोजर रेंग रहे हैं मेरे उर के ऊपर
जैसे केंचुए रेंग रहे हैं आज सब जगह भू पर
इधर-उधर से बहकर सड़कों पर पानी भर आया
विरही की आंखों को भी जिसने बेढब शरमाया
मैं नैनों से नित्य पिया करता हूं ले उनका खत
वर्षा ऋतु में पीते हैं जैसे नीबू का शरबत
अगहन में आवेंगी वह सुनता हूं सांझ सवेरे
किसी भांति दिन बीते भी, निशि बीतेगी कैसे रे

२५-६-४३]

छब्बीस

"यही है इस जीवन का मोल
अंग्रेजी, हिस्ट्री, लाजिक मैंने सालों तक घोखा
पास एम० ए० कर रंग जमाया अपना सबसे चोखा
मिली सिफ़ारिश मुझे न कोई बड़ा नहीं बन पाया
झुक-झुक कर सलाम करना कालेज ने नहीं सिखाया
कोई रिश्तेदार नहीं पबलिक सरविस कमिशन में
मेरी गणना भी न हो सकी किसी भांति हरिजन में
लेखक बनना अधिक सरल था मैं लेखक बन बैठा
समझा रौब जमेगा सब पर और रहूंगा ऐंठा
पुरस्कार के लिये लेख जब भेजा सम्पादक को
उत्तर आया टिकट भेज कर तुम लौटा लो उसको
अब तो बस कविता करता हूं खूब हृदय झकझोर
शब्द मिले या नहीं खींच लेता हूं तोड़-मरोड़
नयन कांटों पर दिल को तोल"

२-१०-४३]

सत्ताइस

पत्र लिखने जा रहा था

रात के बाहर बजे थे, गगन में तारे सजे थे
बोलते जंबूक, और विहाग मैं भी गा रहा था

क्विक की स्याही भरी थी, लेखनी मेरी धरी थी
ध्यान में आतीं न थीं वह, ध्यान बरबस ला रहा था

क्या लिखूं मैं सोचता था, बाल सिरका नोचता था
ढूंढ़ने में बस किताबों बीच भटका जा रहा था

नैन भी आंसू न लाए, प्याज तक मैंने लगाए
पत्र भींगे किस तरह इस सोच में ग़म खा रहा था

लेटर पेपर ले संजोया, सेन्ट से उसको भिगोया
अक्षरों में स्नेह की फिर मेह में बरसा रहा था

पार्क से मैं फूल लाऊं, पत्र में उसको दबाऊं
विजन पथ पर पांव को मैं जोर से दौड़ा रहा था

" राह में कुत्ता पड़ा था, ताक में मेरे खड़ा था
भूंकने मुझ पर लगा, पर प्रेम में दिखला रहा था

निज भवन की ओर भागा मैं निरा बनकर अभागा
और वह पीछे हमारे कुछ उछलता आ रहा था "

१०-१०-४३]

अट्ठाइस

अरे नहीं देखा है तुमने कविजी को जो एकाकी हैं ?

लम्बे केश, धंसी है आंखे, कर मानों हैं युगल सलाखें
झुका शरीर, सियालकोट की मानो बनी एक हाकी हैं

टांगें मानो बांस पुराने, कौन मनुष्य इन्हें पहचाने
लम्बाई में ऐसे मानो अमरीका के गिरि 'राकी' हैं

जाते प्रतिदिन मयखाने हैं, प्रेम दीप के परवाने हैं
इसी खोज में रहते निशि-दिन मिलता कहां मुझे साकी है

पढ़े-लिखे कुछ ऐसे-वैसे, कविता पढ़ते लेकर पैसे
बात-चीत में कभी न चुप होते मानो पूरे टाकी हैं

प्रगतिशील अपने को कहते, सुन्दरता-सरिता में बहते
धैवत स्वर है, कवि सम्मेलन में, जाकर गाते बाकी हैं

१२-१०-४३]

उन्तीस

बेढब हृदय को थाम लो
दुनियां नयी, युग है नया
अब वह जमाना लद गया
अब तो करेंसी नोट में तुम भी प्रणय का दाम लो

बूटी लिये हो घूमते
तुम घास को हो चूमते
देखो इधर स्काच ह्विस्की के तनिक दो जाम लो

है आज समता का समय
जैसे जनम वैसे प्रलय
गेंहूं, चना, जौ और आलू एक ही अब दाम लो

तुम आम के हो फेर में
तुम हो पड़े अंधेर में
लो जीनियां, बेगनोनिया लो, और थोड़े पाम लो

५-११-४३]

तीस

मैंने सुबह नहाना चाहा
कंपन का घन घिरकर छाया
सरदी के भय से घबराया
भाग जाय जिससे कुछ सरदी
मैंने गाना गाना चाहा
मैंने सुबह नहाना चाहा

हिम्मत तनिक न मुझमें आयी
मैंने एक भैरवी गायी
लाने को गरमाहट थोड़ी
मैंने तेल लगाना चाहा
मैंने सुबह नहाना चाहा

जब पानी ने बाण चलाये
पुरखे कई याद तब आये
बड़े भोर यह सब क्यों प्रियतम
केवल तुम तक आना चाहा
मैंने सुबह नहाना चाहा

८-११-४३]

इकत्तीस

तुम प्रिये घरबार देखो

मैं बड़ा अब हो गया हूं काव्य में लिखता नया हूं
पास मेरे ढेर से सम्मेलनों के तार देखो

कौन भोजन अब यहां है, दाल रोटी भी कहां है
टोस्ट बिस्कुट चाय का प्रियतम वहां भंडार देखो

ठाट से कविता पढ़ूं मैं, ख्याति के रथ पर चढ़ूं मैं
तुम प्रबन्ध करो सभी घर का प्रिये परिवार देखो

पूछ कितनी है हमारी मति न समझेगी तुम्हारी
लोग कहते हैं मुझे क्या, तुम तनिक अखबार देखो

तुम पढ़ो कविता हमारी, आंख खुल जाये तुम्हारी
हूं अलग सबसे, हमारा है अलग संसार देखो

१५-११-४३]

बत्तीस

बड़ी लंबी वियोग की रात

जाग रहा है प्रेमी खाता है पीड़ा की लात
सांस नहीं ले रहा, सहारा का है झंझावात

नैन हुए है इसके टांडा[1] के परिपूर्ण प्रपात
पर वियोग की कटी न रजनी जैसे दो से सात

नहीं पता क्या जाड़ा है, क्या गरमी, क्या बरसात
सब सम है चाहे पुलाव हो चाहे बासी भात

स्मृति-चरखे पर एक नाप का सूत रहा हूं कात
पर रूई के धागों से कब बेढब बुना बनात

१८–११–४३]

१—विंध्याचल में एक जल प्रपात

तेंतीस

प्रियतम अब मुझे बचालो

है टोस्ट मिठाई चाय कहां, इस ठाले में है व्वाय कहां
जलपान के लिये अपने हाथों घास खोद कर खालो

तुमको यदि यहां बुलाऊं मैं, खाऊं क्या तुम्हें खिलाऊं मै
मां से अपनी तुम पूछ तनिक मुझको ही वहां बुलालो

मैं याद तुम्हारी करता हूं, चिमनी सी आहें भरता हूं
है लगी अश्रु की यहां झड़ी, है रेल यात्रा कठिन बड़ी
मेरे दिल को वी० पी० से प्रेयसि अपने यहां मंगालो

२१–११–४३]

•

चौंतीस

पागल होता क्यों मन
मत पीछे दौड़ हवा के
अपनी सब बुद्धि गवां के
मिलना है कठिन छटांक जहां फिर मिलै कहां से दो मन

कुछ टोस्ट उड़ाया कर तू
अंडे भी खाया कर तू
तू क्या रटता है लड्डू पेड़ा बरफी दलबेसन

तू मिनिस्टरों के घर में
दिल्ली के डगर-डगर में
भगवन तेरे हित छाना मैंने भारत का कन-कन

है नहीं रजाई कम्बल
घी का भी नहीं यहां बल
अब काट रहो कै सर्दी भगवान हमारी लिपटन

अब तक जो दुख सहा है
मन अब यह सोच रहा है
कमला को पूजूं अथवा पूजूं कमला के बाहन

१०-१२-४३]

•

पैंतीस

आज विजय की बेला
उनको बैठाकर मादक बन, खींच रहा हूं ठेला

मैंने समझा उनका प्रेमी मैं हूं एक अकेला
जब देखा जाकर उनके घर लगा हुआ है मेला

बरछी-तीर-तोप-पिस्तौलों का है नहीं झमेला
चोट किया करती हैं वह तो फेंक आंख का ढेला

मैं बलि जाऊं तुम्हारे ऊपर, खेल अजब है खेला
बातों-बातों में जगती को बना लिया है चेला

उनके आगे किया समर्पित सेब-टमाटर-केला
दिया उन्हीं को सब कुछ बेढब पैसा और अधेला

फिर भी मस्ती में कैसा हूं बना हुआ अलबेला
उनको देकर सब कुछ जीवन अपना किया दुहेला

३-१२-४३]

छत्तीस

गया तुमसे हार
कहाँ छकड़ा मंद गति का कहां मोटरकार

आप नभ में मैं धरा पर, भांति हो किस भेंट
बंक के हैं आप स्वामी यहां खाली टेंट

आपने फ़र कोट को ऊपर लिया है रोप
है यहां धोती पुरानी और है कंटोप

आप के तिरछे नयन अंगूर-जल से चूर
यहां सपने में कभी देखा नहीं अंगूर

आपका जलजात-सा है स्निग्ध कोमल गात
शुष्क अरहर डाल मुझको कर रहीं है मात

आप की छाया बनी है चांदनी का रूप
और मैं दिन में बना हूं अंधकार स्वरूप

४--१२--४३]

सैंतीस

हे हरि हरो उर की पीर

बेध देता है हृदय को शीतयुक्त समीर
पड़ रही है ठंड ऐसी नीर, भी है तीर

है नहाना अग्निसागर पार करना चीर
शुद्ध मुंह करना बड़ी है प्रात टेढ़ी खीर

हो गया कालेज समय, वह हो गयीं गंभीर
पर नहीं इसकी हुई मुझपर तनिक तासीर

मैं रजाई में पड़ा हूं धरे उर में धीर
जिस तरह भगवान लेटे मध्य सागर क्षीर

१४--१२--४३]

•

अड़तीस

कौन तुम्हें अबला कहता है
तुम हो मोटर कर चलाती
वायुयान पर तुम हो जाती
कभी अखाड़े में भी जाकर
कुश्ती के तुम दांव दिखाती

बला भले कहले, पर तुमको दुर्बल कौन भला कहता है

तुमसे बूढ़ा शरमाता है
युवक देखकर घबड़ाता है
जहां तुम्हारी हठ होती--
जगतीतल हार मान जाता है

तुमसे ही डरकर अर्जुन अपने को ब्रहन्नला कहता है

तुमने कितने युद्ध कराये
कितनों के हैं राज गंवाये
सुधा घोल अधरों में
कितनों को तुमने विषपान कराये

यही कहानी दुनियां में दिल का प्रत्येक जला कहता है

तुलसी के हो मानस में तुम
सूरदास के साहस में तुम
यश में तुम सरबस में तुम हो
कविता के हो नव रस में तुम

पर तुम नहीं किसी के बस में, जग चिल्ला-चिल्ला कहता है

२--१--४४]

उन्तालीस

“ वह संपादक बन गये आज
उनके ही लेखों से मिल गया आज भारत को है स्वराज

जब फेल हुए वह पांच साल
दसवीं से ऊपर उठ न सके
कालेज में जाकर वह बालाओं के
समाज में जुट न सके

पत्रों की ओर तुरत झपटे जैसे कपोत पर गिरे बाज

उनको मिल गये प्रकाशक जी
जो देश-देश चिल्लाते थे
सरकारी नोटिस छाप छाप
खाते थे और कमाते थे ”

भोली-भाली जनता में जो खेते थे कागज की जहाज

फिर तीस रूपये मासिक पर
संपादक वह बन गये वहां
महिलाओं को लेखिका बनाने लगे
खोज कर जहां-तहां

इससे बढ़ कर संपादक वर को मिला न कोई और काज

है राजनीति, साहित्य और भाषा के
वह पंडित महान्
जैसे हिन्दी के न्यूटन थे
या पाली के थे किंग जान

है दुःख इन्हें क्यों नहीं पूछता है हमको हिन्दी समाज

कवियों में तुलसीदास तथा
नेताओं मे बनते गांधी
महिलाओं के सम्मुख बन जाते
प्रगतिशीलता की आंधी

ऐसे ही रत्नों से हिन्दी मां की है शोभित आज लाज

१६-२-४४]

चालीस

था नवीन प्रभात आया
प्रिये था तुमने बुलाया
हृदय मेरा आज प्रियतम
था न अपने में समाया

पूर्ण होंगे आज सब अरमान, था विश्वास

साज थे कितने सजाये
बहुत से बाजे बजाये
मैं हुआ तैयार साथी
आ न जाये, जा न पाये

बस यही थी कामना बैठूं तुम्हारे पास

तुम मिलो मैं स्वर्ग पाऊं
छोड़ कर तुमको न जाऊं
त्याग कर संसार सारा
मैं गले तुमको लगाऊं

तुम रहो यदि सग मेरे, मैं तुम्हारा दास

आज प्रातः पत्र आया
हृदय से उसको लगाया
प्रिये तुमने क्रूर कैसा
यह संदेशा है पठाया

हो गयी सर्दी तुम्हें, छूटी मिलन की आस

२७-२-४४]

•

इक्तालीस

मैं कविता करने वाला हूं

कवि-सम्मेलन में जाता हूं उनके पैसे से खाता हूं
जो भाड़ा मुझको मिलता है उसमें से बहुत बचाता हूं
सब लोग बुलाते हैं मुझको मैं आफ़त का परकाला हूं

संयोजक मेरे चेरे हैं लड़के भी मुझको घेरे हैं
कालेज-स्कूल नुमायश में राग अपने मैंने टेरे हैं
मैं हूं नसीम, मै नरगिस हूं, मैं ही तो काननबाला हूं

मैं पाजामा सिलवाता हूं मैं दालमोठ मंगवाता हूं
जब कविता पढ़ने जाता हूं सामान लिये कुछ आता हूं
मैं सूखे थन को दूह लिया करता हूं ऐसा ग्वाला हूं

तसवीरें मेरी छपती हैं बालाएं मुझको जपती हैं
" जो कुछ मैं लिख दूं अगड़म-बगड़म वह रचनाएं छपती हैं
मैं प्रगतिशील कवि हूं सुन्दर साहित्यिक गर्म मसाला हूं "

४-३-४४]

०

बयालीस

वह तो हैं जैसे बिजली की लट्टू

बिना स्नेह की चमक दमक है, रूप नहीं है बस रूपक है
सब दिखावटी साज बना जैसे व्यापारी जट्टू

हृदय हमारा प्रेम पुजारी, कृत्रिमता का नहीं भिखारी
उन्हें देख रुक जाता है यह जैसे अड़ियल टट्टू

सर्ज आंख को नहीं सुहाता, ट्वीड नहीं है मुझको भाता
मुझको अच्छा लगता है केवल कशमीरी पट्टू

इससे मुझे बचाओ प्रभुवर, चकाचौंध का लगा प्रखर सर
जैसे सब बातों से बचता रहता बालक रट्टू

१४-४-४४]

तेतालीस

मैं क्यों कविता करता हूं

कैसे उर की पीर जताऊं
उनको अपनी व्यथा बताऊं
जहां हवा भी पहुंच न पाती
मुझको वहां यही पहुंचाती
यही पोत है इससे ही मैं प्रेम उदधि तरता हूं

उनको पत्र नहीं लिख पाता
कौन लगाऊं उनसे नाता
नहीं दूर का भी लगाव है
वह बरसात न हूं मैं छाता
हृदय खोल इसके द्वारा उनके सम्मुख धरता हूं

इसने जीवन दान दिया है
यद्यपि कुछ बदनाम किया है
कुछ न सही कवि सम्मेलन में
इसका रसमय धार पिया है
इसके द्वारा मैं कुरंग बन प्रेम घास चरता हूं

१६–४–४४]

०

चवालीस

प्रेम इसे कहते हैं

हम हैं एम०ए० और बी०टी० है कहने को प्रोफेसर हैं
वह बी० ए० बी०टी० हैं, हमसे वेतन में बढ़कर हैं
वह प्रयाग में टीचर हैं हम काशी में बसते हैं

क्रिसमस और दशहरा में वह जलसों में जाती हैं
गरमी में वह हवा सुशीतल शिमला की खाती हैं
कभी-कभी हम भी उनका बस यशोगान सुनते हैं

हम प्रयाग जब जाते, सुनते उन्हें कहीं जाना है
मीटिंग है, या टेनिस मैच है, या दावत खाना है
बैठे बंगले पर हम केवल राम नाम जपते हैं

वह कहती हैं दूर-दूर से परख प्रेम की होती
सीपी में वियोग के बनता पूर्ण प्रणय का मोती
मैं रोता हूं लोग हमारे ऊपर क्यों हंसते हैं ?

२२–५–४४]

पैंतालीस

रूपसि तू खरी परी-सी है
सुन्दर मधु-सी
जीवन को पार लगाने को भवसागर बीच तरी-सी है

तू है कठोर, पर बाहर से–
अंतर है स्नेह भरा, कोमल, प्रेयसि तू निरी गरी-सी है

नैनों में तेरे जादू है
कुछ झुके, मदिर, तिरछे, विशाल मानो शिशुमृगी डरी-सी है

काया है–विद्युत की छाया
पतली है, दुति की खान, मनोहर, मंजुल कनक छरी-सी है

२६–५–४४]

छियालीस

मै मानव कितना दुर्बल हूं

संयम के सब शास्त्र पढ़े दर्शन को लेकर घोंटा
मन वश में करने को यतियों के चरणों में लोटा
नयन रसीले, लोना मुखड़ा, क्षीण जहां कटि देखी
लांघ गया मेरा मन सारे जप-तप का परकोटा ''

चचल जगती में मै कितना चचल हूं

नयनों को बरछी समझा, समझा कपोल को मक्खन
उनकी मुस्कानों को मैंने समझा उर का स्पन्दन
नव रस से, षट रस से, जानी बढ़कर उनकी बातें
उनका ही दर्शन था मेरे लिये ब्रह्म का दर्शन

जानबूझ कर भी कितना पागल हूं

जल पर मैंने चित्र बहुन रंगों से भरकर खींचा
मानस के जल को मैंने नैनों से नित्य उलीचा
पास न थी मुमताज किन्तु मै ताज बनाने बैठा
लता न थी क्या जाने किसको लता समझ के सींचा

अपने से करता छल हूं

४–६–४४]

●

सैंतालीस

प्रियतम भविष्य का वादा क्या

धोती तो मिलती नही अभी, गजो तक सिलती नहीं अभी
जाड़े में पशमीने का होगा मिलकर मुझे लबादा क्या

जब देखो है त्योरी बदली, छाती पर मूग सदैव दली
मरने पर उर के घावों पर मलहम का पीपा लादा क्या

गठरी हो तुम अभिमानों की, मैं गठरी हूं अरमानों की
मुझको न भुलावे में रखो, है कह दो ठीक इरादा क्या

था अपने उर का शाह कभी, उसकी छोड़ो परवाह सभी
बनवाना है अपने दरवाजे का अब मुझे पियादा क्या

२-७-४४]

अड़तालीस

जाग-जाग कर रैन बितायी

धंसे नहीं मृगनैनी के नैनों के कांटे
चला गया था रात दूसरे शो में सिनेमा
पड़ी लौटने पर ऊपर डाटों पर डाटें

आंखों में मेरे फिर नींद न आयी

सोच रहा था अब पुकारती हैं ब्यालू को
बीत गये घंटे, पर हुईं न टस से मस वह
जिह्वा से मैं चाट रहा था निज तालू को

पर न हृदय में उनके कुछ भी दया समायी

उठा शक्ति भर अपने उनको लगा जगाने
बहुत पुकारा, फिर दोनों हाथों को खींचा
जाग गया तमचूर लगा मुल्ला चिल्लाने

दरवाजा खोलो महरी बाहर चिल्लायी

८–७–४४]

●

उनचास

यह चंचला-सी चाल
हृदय में सबके उठाती है बड़ा भूचाल

प्रेमियों को खल रही है, वक्र गति से चल रही है
राजनीतिक जिस तरह मस्तिष्क का हो हाल

क्षीण रेखा एक आयी क्षणिक निज शोभा दिखायी
हो गया यौवन हृदय का कांप कर बेहाल

कभी उठ जाती ललक-सी, कभी झुक जाती पलक-सी
जिस तरह झुक जाय यौवन-प्रणय-पंछी-पाल

कभी छिपता तन-बदन है, नयन में जैसे नयन है
जिस तरह महिला छिपाती आयु के निज साल

क्षुब्ध पारद सी बनी है, विकलता में ही सनी है
भूख से बेहाल हो जिस भांति से कंगाल

६-८-४४]

[एक नृत्य का चित्र]

पचास

तुम मुझे अपना बनालो

जी रहा हूं, मर रहा हूं
नष्ट जीवन कर रहा हूं
कल्पना-वन में प्रणय की
दूब डट कर चर रहा हूं

हो कृपा, मुझको प्रिये तुम स्नेह का नपना बनालो

मैं खड़ा हूं इस किनारे
निशा, निर्जन, बे सहारे
दूर तुम हो जिस तरह
आकाश के जगमग सितारे

म नौका ले मुझे संयोग का सपना बनालो

२८-१०-४४]

•

इक्यावन

कैसी बिछी चांदनी आज सड़क पर
उनके दांतों का प्रतिबिंब मनोहर
या मक्खन से लीप दिया है घर-घर
या बूढ़ों के केश उड़े हैं कट कर

कहीं नही अवनी पर कुछ भी काला
जूही की बगराते कली निराला
बहा हास्य रस का कोई परनाला
अंगड़ाई लेती अंग्रेजी बाला

नीरा को ढुलकी है मानो प्याली
डिब्बा करके कोकोजेम का खाली
बैठी है मानस की मंजु मराली
गिरा हँस रही बजा-बजा के ताली

४-११-४४]

कार्तिक की पूर्णिमा का शब्द चित्रण है।

बावन

है स्वर्ग पहुंचना सरल, कठिनतम उन तक बेढब जाना है
हैं थानेदार पिता उनके, हैं ताऊ उनके पहलवान
नौकर दरवाजे पर रहता है दैत्यवंश का सुत महान
बे भूके काट लिया करता जो उनका कुत्ता काना है

संध्या को सिनेमा जाती, हैं प्रात: समीर वह खाती है
दिन में मेरा कालेज होता बातें कुछ समझ न आती है
मैं मिलता मग में किन्तु निकट ही चेतगंज का थाना है

वह आर्य समाजी है, रविवार भी नहीं उनका खाली है
बोलो किस भांति हरी हो सूख रही जो दिल की डाली है
बे शमा जला करता है मेरा दिल ऐसा परवाना है

चिट्ठी ले जाय कौन भला, है लगता मेरा तार नहीं
उड़कर भी पहुंच नहीं सकता मानव हूं मैं परदार नहीं
है पोस्टमैन ईमानदार रिशवत का नहो जमाना है

पत्री पतंग पर मैं लिखता, कट जाय न डोर कहीं, डर है
मैं यक्ष नहीं हूं और न बादल ही कुछ मेरा नौकर है
कविताएं लिख-लिखकर उनको पत्रों में अब छपवाना है

२५-११-४४]

तिरपन

मैं शाल ओढ़ कर चलता हूं
मैं सूट सर्ज के बनवाता
कलकत्ते के फुट पाथों का
पर, गान सदा हूं मैं गाता

मै महिलाओं का प्रेमी हूं
जो क्रीम पोतकर चलती हैं
पर भिखारिनोंकी करुणा ज्वाला–
से कविताएं जलती हैं

मैं नवयुग का हूं दूत बना
हलचल की बीन बजाता हूं
संदेश क्रांति का पैसे ले लेकर
मैं सदा सुनाता हूं

अपना मैं दोष नहीं देता
मैं सबको गाली देता हूं
जो पूज्य देवता हैं सब के
उनका मैं पानी लेता हूं

“ मैं नव साहित्य बनाता हूं
तुम भले उसे कूड़ा कह लो
मै गोबर जल में घोल रहा
इसमें से तुम मक्खन मह लो ”

१८-१२-४४]

•

चौवन

जीवन में प्रगति अगर चाहो तुम अपना मार्ग बदल डालो
पूरब की राह चले इतने दिन नहीं ठिकाने तुम आये
पच्छिम की पगडंडी पर चल कर तुमने चारों फल पाये
थे रूढ़िवाद को मकड़ी के जालों मे जकड़े पड़े हुए
दकियानूसी कुविचारों के गंदे गड्ढे में गड़े हुए
अब उलट गया युग प्राची नही, प्रतीची में उषा जागी

वेदों की मुरदा पोथी में तुम धर्म ढूंढ़ने चलते थे
तुम राम-कृष्ण की गढ़ी कथाओं से मन अपना छलते थे
गंगा के चक्कर में डूबे, गीता के तुम थे दास बने
अब वह दुनिया है सेक्स जहां भगवान हमारे खास बने
प्राचीन मंदिरों को तोड़ो अब मूर्ति काम की बैठाओ

हिन्दू-विवाह के सस्कार को कहते प्रथा पुरानी हैं
यह तो बर्बरतामयी दासता की दुखपूर्ण कहानी है
उद्धार करो जग की महिलाओं का, उनका बंधन खोलो
नारी-नारी मे भेद नही जय-जय-जय फ्रायड की बोलो
दो दिन में देखो मानव कितना ऊपर को उठ जाता है

जाड़े में फिलिप सवेरे. गर्मी में थोड़ा जिन पिया करो
रूसी झंडों को सांझ सवेरे नमस्कार तुम किया करो
भारत की चिन्ता कुछ न करो रूसी क्यारी में पानी दो
कामुकता का हल खींच रहे जो उन बैलों को सानी दो
संसार सेक्समय हो जाए उद्धार हमारा तब होगा ”

२५–१२–४४]

पचपन

66 सत्य कहना हो कठिन बातें बनाना कब मना है
रीढ़ झुकती जा रही है, जरा भी अब आ रही है
नालियां चिकने कपोलों पर प्रकृति बनवा रही है
पर जवानी के लिये, मूछें मुड़ाना कब मना है

धोतियां पाऊं कहां से लुंगियां लाऊं कहां से
और पाजामें बताओ आज सिलवाऊं कहां से
बंद कमरे में मगर नंगे नहाना कब मना है

वह हमारे घर न आयें, हम वहां तक जा न पाए
बंद फाटक भी रहे, पहरे वहां पर वह दिलाएं
डाकखाने मे लिफाफ़े डाल आना कब मना है

है अहिंसा अस्त्र अपना, बस इसी का मत्र जपना
युद्ध का इस जिन्दगी में भूलकर देखो न सपना
भाषणों के तोप का गोला चलाना कब मना है

वेश्या का नृत्य भद्दा, टाट का जिस भांति गद्दा
भारतीय समाज पर है यह महान अशिष्ट रद्दा
पर कला के हेतु पत्नी को नचाना कब मना है 99

१२-१-४५]

●

छप्पय

ठंडक की है बलिहारी
टुकड़े उड़े बरफ के, नहीं अंगीठी की चिनगारी
जहां देखिए वहां सृष्टि में फैली ठंडक सारी
किन्तु तनिक भी हुई न ठंडी गर्म नीति सरकारी
ताबे की रोटी है बनी बरफ की सिल्ली न्यारी
गरम-गरम आलू भी मानो हैं हिम की तरकारी
हवा हृदय पर लगी चली मानो चंदन की आरी
बिस्तर सारा आज बन गया है जैसे हिम-गिरि की क्यारी
खस को टट्टी सदृश अंगीठी आज हुई बेचारी
बिजली का हीटर है यह या है गुलाब की झारी
मुर्दे के अन्तस्तल सी है हुई रजाई भारी
खटिया की पाटी कंचनजंघा की भगिनी प्यारी

१४-१-४५]

सत्तावन

सोला टोपी धन्य तुम्हारे गुण सब गाते है
तुम्हें लगाकर ही कितने साहब बन जाते है

रोब दिखाकर ग्रामीणों का हृदय हिला देती हो
भीड़ रेल में अगर बहुत हो जगह दिला देती हो
बिना रोक के लंदन में भी टोस्ट खिला देती हो
गोरे काले साहब के तुम हाथ मिला देती हो

पढ़े लिखे बाबू ने सिर के ऊपर तुम्हें बिठाया
मानो इस शरीर के घर के ऊपर छप्पर छाया
कहते है सब लोग घाम से तुमने हमें बचाया
तुमसे साहब का ख़िताब हम कालों ने भी पाया

अगर न होतीं तुम भारत में बड़ी कठिनता होती
ग्रामीणों की भांति बांधते लोग सिरों पर धोती
जहां जमीं तुम, पा जाती है रौनक, सूरत रोती
घोंघे सा चेहरा बन जाता जैसे मोमो मोती

रिक्शा वाले कठिन धूप में रिक्शा जभी चलाते
तुमसे ही वह घोर ताप से रक्षा है पा जाते
जब मिलता अवकाश चबेना तुममें रख कर खाते
भाजी शाक उसी में रखकर बाजारों से लाते

तुम उपयोगी उसी भांति ज्यों आई० सी० एस० वाला
है अचरज महिलाओं ने क्यों सिर पर नहीं बिठाला
तुमसे ही अफसर पहचाना जाता है भारत में
गांधी टोपी की ताकत ने तुमको नहीं निकाला

१४-४-४५]

अड़ावन

क्या हो तुम कुछ भी न समझ में मेरी अब तक आया
जाल बिछाया ऐसा तुमने जैसे जग में माया
तुम हो धूप एक क्षण में फिर बन जाती हो छाया
कितने मानव को है तुमने बना दिया चौपाया

हृदय फिसलता है तुम पर तुम तो जैसे काई हो
मगर मूड़ती हो जैसे इलहाबादी नाई हो
उर की पीड़ा हर लेती मानों शिक्षित दाई हो
मेरे लिये प्रिये तुम मीठी-मीठी सी लाई हो

बनी आग की हो अथवा तुम हो बिजली की भाठी
कभी जलाती हो तुम जैसे जलती हुई लुआठी
आंखें चोट कठिन करती ज्यों मिरज़ापुर की लाठी
लड़ने की है नीति तुम्हारी पूरी प्रिये मराठी

१८-५-४५]

उनसठ

तुम कहते हो रोया न करो

माना तुम हो मेरे ेमी, सच्चे, आदश, बड़ नमा
तुम स्वस्थ बनाने को हमको विष से प्रियतम धोया न करो

तुम बड़े वचन के पक्के हो, तुम नीति-यान के चक्के हो
मेरे सुख-दुख का सब बोझा अपने ऊपर ढोया न करो

क्या तुम्हें खेत है और नहीं, यह उगजाएंगे और कहीं
कांटे वाले फूलों को मेरे आंगन में बोया न करो

२३-५-४५]

साठ

पश्चिम से हवा चली है

सभ्यता चली द्रुत गति से, मनसिज भी रुठा रति से
है प्रेम न उर का सौदा, वह तो बुखार फ़सली है
हैं देव कहां या देवी, पागल हैं इनके सेवी
पूजा सिनेमा के तारों की होती गली-गली है
अंग्रेजी क्यों न पढ़े हम, ऊंचे पर क्यों न चढ़ें हम
अंग्रेजी वाला हिन्दी वाले से अधिक बली है
भारत की परियां काली जैसे तमाल की डाली
लन्दन की कोयले वाली जूही की एक कली है
पत्नीजी टाइप चलातीं, दो सौ मासिक हैं लातीं
पतिदेव निरे टीचर हैं सत्तर मे उमर ढली है
पूरब की जो है नारी वह कहां सुघर बेचारी
पश्चिम कुमारी खस्ता बिसकुट से सदा पली है
पूरब की बनी मिठाई लगती है जैसे काई
पश्चिम की मिट्टी लगती मिश्री की एक डली है

६–६–४५]

●

इकसठ

मनाया बहुत पर उन्होंने न माना
कहा—आज भाई बुलाने पधारे
बड़ा काम है एक घर पर हमारे
पिताजी नया मोल घर ले रहे हैं
लिखा है कि आ और तू देख जा रे
इसी के लिये हो गयीं वह रवाना
सवेरे कहां चाय, जलपान कैसा
न कत्था, सुपारी भला पान कैसा
पता कुछ नहीं दाल-चावल कहां है
धरा है कहां कौन सामान कैसा
“मुझी को पड़ा आज भोजन बनाना
जला हाथ, हलवा हुआ भात सारा
हुई आज भाजी नमक का पिटारा
बनी दाल ऐसी अजब आज बेढब
धंसा लाज से है समुंदर बेचारा
नहीं रोटियां, कोयला है चबाना ”

७–७–’४५]

[उनके घर चले जाने पर]

●

बासठ

सखी री अब क्या गाऊं गान
डर है निकल न जाये इस घटना से मेरा प्रान
कौन ठोक कर पीठ हमारी अब रखेगा मान
गए निकाले हैं लखेदकर अमरी[1] मियां महान
कहीं न दे-दे भारत को स्वराज अब इंगलिस्तान
अरे लियाकत[2] भैया कैसे होगा पाकिस्तान
जाकर कहो गालियां दे बढ़-बढ़ करके अब 'डान'
किसी भांति से शोर मचाओ और युद्ध दो ठान
शाहाना हम लोग, हमारी शाहाना है शान
कैसे मजदूरों को हम शासक लें अपना मान
कहां जॉन अमरी से मंत्री चरचिल कहां प्रधान
कहाँ कबाडी, खनक, कूली, घसियारे, गाड़ीवान

२६-७-४५]

---

१ भारत के सचिव इंगलिस्तान में
२ लियाकतअली खां से अभिप्राय है

तिरसठ

रिमझिम रिमझिम वर्षा आयी

मानों किसी विरहिनी ने प्रियतम की चिट्ठी पायी
दादुर की टरटर की ध्वनि कानों को कैसी भाई

देतो कवि सम्मेलन में है कविता जिस भांति सुनाई
जहां तनिक सी भी मिट्टी है, घास वहां उग आयी

ज्यों जग के कोने-कोने देते अंग्रेज दिखाई
पत्थर पर भी जहां-तहां देखो फैली है काई

सूरज की छिप गयी चमक, नभ में बदली है छायी
या अलकावलि उनके सुन्दर आनन पर लहरायी

सड़कों पर कीचड़ की ऐसी बेढब है अधिकाई
मानों फैलादी है बिधि ने लाकर यहां मलाई

१९-८-४५]

चौंसठ

घर घरर-घरर मेरे सम्मुख बिजली का पंखा घूम रहा

मत इसे निरा पंखा समझो
यह तो सजीव मस्ताना है
चक्कर पर चक्कर काट रहा
पूंजी वालों का नाना है

चल रहा निरंतर दुःख भरा प्रियतम से है महरूम रहा

सम्मुख चाहे कोई आये
चूहा हो चाहे बिल्ली हो
बलिया हो या हो बहराइच
काशो हो चाहे दिल्ली हो

अपनी मंजिल पर चला जा रहा है मस्ती में झूम रहा

पूंजीवादी जो जग में हैं
यह उनकी एक निशानी है
इस प्रगति शीलता के युग में
यह पंखा विष का पानी है

पूंजीपतियों का रक्षक है क्या तुम्हें नहीं मालूम रहा

जो घुरहू और पबारू है
वे गरमी में मर जाते है
और आप लगाकर टेबुल पर
बिजली का फैन चलाते है

इनको अब झाड़ मिटा देंगे यदि प्रगतिशीलता 'ग्रूम' रहा ''

७–९–४५]

पैंसठ

चीनी की ख्याति हुई, पर
चीनी का अब भी टोटा
शक्कर की कौन कहे, है
मिलता न कहीं पर चोटा

कपड़े का मिला न मुझको
बेढब, आवश्यक कोटा
ससुराल जा रहा हूं मैं
बस पहने एक लंगोटा

हिन्दू मुसलिम में किसको
वह कह सकते हैं छोटा
दोनों पानी वाले हैं
यह बंधना है वह लोटा

इस राशन के युग में है
कोई न कहीं पर मोटा
सबकी हड्डी ने लांघा है
चमड़े का परकोटा

सप्लाई के दफ्तर में
रह गया न कोई छोटा
हंडे भर गये जहां पर
था नहीं एक भी लोटा ''

७-१०-४५]

यह उस समय की रचना है जब सब वस्तुओं पर राशन था ।

छाछठ

“किस तरह निकले कहो अरमान।
गालियां देने नहीं आता तुम्हें
और गुंडापन नहीं भाता तुम्हें
तब न मिल सकता तुम्हें सम्मान।

झूठका अभ्यास, अच्छा, तुम करो
दंभ से अपनी सुरक्षा तुम करो
इस धरा पर तुम बनो भगवान।

एक संस्था हाथ मे अपने धरो
लोक हित का स्वांग जगती में भरो
और हलवे का करो जलपान।

आज सतयुग है, न है कलिकाल
वह बड़ा है, पास जिसके माल
है ठगी सबसे बड़ी दूकान।

आज के ऋषि पश्चिमी विद्वान
और मुनि हैं मार्कस सरिस महान
राह इनकी तुम चलो सच मान
शीघ्र ही निकलें सभी अरमान।”

१३-१०-४५]

●

सड़सठ

आओ रहें बराबर साथी

काम भले हो भिन्न हमारे
इससे क्या कुछ है होता रे

तुम्हीं सेठ हम 'राबर' साथी

बड़े रहो तुम या छोटे हो
सच्चे हो तुम या खोटे हो

तुम सांगा हम बाबर साथी

मिलें न तब भी रहें एक में
जग सरिता में बहें एक में

जैसे पानी ढाबर साथी

१६-६-४६]

अड़सठ

क्यों मुझको देती हो गाली

चुम्बक सा है रूप तुम्हारा
मैं कच्चा लोहा बेचारा

कैसे खिच न जाए ए आली

मेरे जीवन-पथ की संबल
तुम हो देहरादूनी चावल

मैं जैसे भूखा बंगाली

मक्खी सा है हृदय हमारा
फंसा जहां उसने पर मारा

तुम तो हो मकड़ी की जाली

चुग लो ये मोती के दाने
आंखे लगी इन्हें बिखराने

मानस की हे मंजु मराली

तुम्हें देख होता हर्षित मन
देख-देख करता है नर्तन

उसी भांति जैसे संथाली

२३–६--४६]

■

उनहत्तर

जागो-जागो आया प्रभात

अपनी सरकार बनी प्रियतम
अब छानो भंग घनी प्रियतम
है समय मान का बीत गया
छोड़ो अब तना-तनी प्रियतम

अब ताजा मोहन-भोग बने
फेंको बासी जो पड़ा भात

पाटो जो बीच पड़ो खाड़ी
चलने दो आपस की गाड़ी
है घबड़ाने की बात नहीं
होगी तो रक्तमयी नाड़ी

चलने पायेगी खुराफातियों की
न तनिक भी खुराफात

तुम तो स्वतन्त्रता की रानी
मैं भी स्वतंत्र हूं अभिमानी
आओ हम तुम मिलकर गाएं
स्वाधीनमयी युग की वाणी

सपने की दुनिया छोड़ चलो
खोलो आंखें, है गयी रात

२४--८--४६]

सत्तर

८८ मैं सीख रहा था बाइसिकिल
मैं बैठा थोड़ी दूर चला
सम्मुख बाबू साहब आये
पहिया मेरा दांये घूमा
बाबू साहब आए दांये
तब लगा धड़कने मेरा दिल

मेरी भी बाइसिकिल जाती
जिस ओर घूम कर वह जाते
बेकार हो गये ब्रेक दोनों
बाबू थे शायद मद माते
तब लगा बनाने मैं सरकिल

साइकिल उनकी गरदन पर थी
मेरे सम्मुख था महा काल
मैं लगा मयूरासन करने
उनकी आंखें थीं लाल-लाल
मेरा आनन फेनिल-फेनिल

खंडहर से हम दोनों बैठे
तब लगे सुनाने वह गाली
मुझको यह जान पड़ा पढ़ते है
वह यूनानी या पाली
तब गया कलेजा मेरा हिल—

कितने ही दुनिया के पशु-पक्षी—
में मेरी कर दी गणना
संबंध मधुर कुछ जोड़ लिये
मैं ज्ञानवान था मूर्ख बना
बन गया आज पूरा जाहिल—

बच गयी आँख, फूटा घुटना
छाती छिल गयी, फटा कुरता
गुमटा माथे में उमड़ गया
हो गया अंगूठा भी भुरता
पाओं कीं उंगली गयी कुचिल

था एक समूह समीप खड़ा
हो मुग्ध-मना रस लेता था
मानों मैं किसी फिल्म का
कोई दुश्चरित्र अभिनेता था
बालक कुछ कहते थे खिल-खिल— ”

१५--९--४६]

इकहत्तर

" मैं, देश प्रेम कैसा हो खूब जानता हूं
व्हिस्की बरांडी के मै पास हूं न जाता
ये वस्तु हैं विदेशी कैसे इन्हें मंगाता
ठर्रा कभी, कभी मैं कुछ भंग छानता हूं
बाहर सदैव खद्दर में ठाट से पहनता
घर में विलायती में कुछ दोष हूं न गिनता
मुख से सदैव खद्दर के गुण बखानता हूं
घर में विलायती है सामान भी हमारे
है बैठका हमारा चरखा मगर संवारे
मैं सूत कातने का कानून जानता हूं
सेवक स्वदेश का मै, चन्दा वसूल करता
थोड़ा बहुत इसीसे मैं जेब नित्य भरता
अपनी सदा सभी की संपत्ति मानता हूं
बैरी किसान का हू मजदूर को सताता
अनपढ़ गरीब जनता पर रोब भी जताता
पर राष्ट्रीय झडा में रोज़ तानता हूं-- "

६--१०--४६]

बहत्तर

पीड़ा के स्वर में मत गाओ
खाने को गेहूँ भी कम है
पड़ा दाल में कोकोजम है
थोड़ी तरकारी थाली में
मानो आंखों का मलहम है

घास उगालो तुम आंगन में सांझ सवेरे उसको खाओ

धोती का सपना मत देखो
नंगा तन अपना मत देखो
सरदी के मारे बीबी बच्चों--
का भी कंपना मत देखो

ऋषियों की संतान खास हो वल्कल के तुम वस्त्र बनाओ

हानि बड़ी ही मिल से होगी
मिल से हुआ देश है रोगी
मिल के कारण त्याग छोड़
हम सब बनते जाते हैं भोगी

ध्वंस मिलों को कर दो सारी, चरखे को अब तुम अपनाओ

नहीं कठिन है आना जाना
है सब केवल व्यर्थ बहाना
बहुत भीड़ हो जाती है
रेलों में मैने यह भी माना

देशभक्त हो, जाना तुम्हें कहीं यदि हो तो पैदल जाओ

१३-१०-४६]

तिहत्तर

सरदी हल्की पड़ रही
ढकी ओस-से है मही
मक्खन की सरिता बही
अथवा फैला है दही
अजब चांदनी रात है
मानों बरसा भात है

रूई का संसार है
या गंगा की धार है
हिम का पारावार है
चीनी का विस्तार है
फैला कुमुद प्रसून है
या यह छिड़का नून है

धवला गिरि है सो गया
कोई मोती बो गया
अंधकार है खो गया
जग चूने से धो गया
धरती का शृंगार है
पोता क्रीम अपार है

घड़ा सुधा का फूट कर
कीर्ति किसी की लूटकर
ताल मखाना कूट कर
तारों का दल टूट कर
धरती पर बिखरा पड़ा
हास्य स्वयं है या खड़ा

युग का नया विहान है
या खद्दर का थान है
अंग्रेजों का यान है
जो करता प्रस्थान है
परछांई है घाम की
ठंडाई बादाम की

१०-११-४६]

चौहत्तर

६६ प्रेम फैलाने वाली है
मिली काली में लाली है
विश्व वंदन करता उसको
चाय की ऐसी प्याली है

गर्म जब तुमको पाते हैं
इंद्र भी ललचा जाते हैं
इसी को पिला-पिलाके लोग
फंसा कितने को पाते हैं

सूट बढ़िया पहने अंग्रेज
कुली ले अपनी टूटी मेज
किया करते हैं तुमसे प्रेम
बना करके हलकी या तेज़

सुधा मुरदों को देती जान
नहीं अब कुछ उसका सम्मान
और तू जीवित जन समुदाय–
को किया करती जीवन दान

पेय तू कैसी लासानी
धन्य तुझसे कवि की बानी
बहाने तेरे थोड़ा दूध
मिला करता है, हे रानी

लोग कहते हैं तू 'टी' है
बड़ी ही तू तो ब्यूटी है
सबेरे पीना तुझको नित्य
सभी मानव की ड्यूटी है

लगाते प्रातः तेरा भोग
लोग कहते उड़ जाते रोग
वियोगी गये तुझे हैं मान
हुआ तुझसे उनका संयोग

कराके थोड़ा तेरा पान
अतिथि का कर लेते सम्मान
नहीं तो इस मंहगी में हाय
कराते हम कैसे जलपान ''

२-१२-४६]

●

पछत्तर

आज यह निस्तब्ध कैसी रात है
पवन का भी शिथिल सारा गात है

नव वधू सा मौन यह संसार है
यह निशा का क्या प्रथम अभिसार है

मुखर उल्लू का कमल मुख बंद है
उल्लुनी कि विरह में निस्पंद है

लीडरों-सा जो बहुत वाचाल था
चीखता जो रात नित्य शृगाल था

फेल मोटर की तरह चुपचाप है
क्या पड़ा जग पर किसी का शाप है

रात चिल्लाते सदा जो, मौन हैं
राह में कुत्ते पड़े या कौन हैं

आज झींगुर की सदा आती नहीं
बोल पायल की न मदमाती कहीं

चेतना से मुक्त क्या संसार है
बे लहर का विश्व पारावार है

२–३–४७]

[सुनसान रात का चित्रण है]

छिहत्तर

जब शिशिर का मास आया
विश्व की कर ठंड संचित
शीत मेरे पास आया

जग विशाल-मना हुआ था
फूल गोभी और आलू
और मटर चना हुआ था

लाल चेहरे हो रहे थे
स्वास्थ के आरण्य पथ में
लोग निज को खो रहे थे

आप आये, आप आये
गजानन का लिया वाहन
मृत्यु धन बन आप छाये

तापमान बढ़ा भयंकर
और गिलटी एक निकली
छोड़ भागे लोग निज घर

डाक्टर लेकर चले पिचकारियां
सूइयां कोचवा रही चारों तरफ
देखो जिधर नर-नारियां

द्वार पर चूना लगाया
देव कांडर का कहीं इगनेशिया का
डाक्टर समुदाय ने भी गीत गाया

आप के दरबार की रौनक मगर
नित्य प्रति बढ़ती गयी ज्यों
स्टीम की चलती रहे जल में कटर

२१-४-४७]

[प्लेग फैलने पर]

सतहत्तर

कवि गीत सुनाओ आओ

कुछ काम न था जीवन में
उठ गयी तरंगे मन में
कुछ धन वालों को पकड़ा
उनको फंदे में जकड़ा
लिख दिये पत्र दस बारह
कवि आओ गीत सुनाओ

लड़के का शीश मुड़ाया
कुछ जशन रहे मन भाया
व्यय कम, उत्सव भड़कीला
देखें साहित्यिक लीला
बस ऐसे काम चलाओ
छपवा दो पत्रों मे यह
कवि आओ गीत सुनाओ

हो ~~प्रेम~~ प्रणय सूत्र का बंधन
मन का कुछ होगा रंजन
अश्लील भांड़ हैं गाते
अप्सरा नही नचवाते
महफ़िल इस भांति जमाओ
संगीत सुधा बरसैगी
कवि आओ गीत सुनाओ

हो राजनीति का जलसा
उलटै भाषण का कलसा
हो गर्म जहां स्पीचें
कविता जल क्यों न उलीचें
कुछ इन पर धाक जमाओ
तुम साथ समय के होगे
कवि आओ गीत सुनाओ

१९-५-४७]

■

अठत्तर

जिस ओर जा रहे है हम लात खा रहे है
उनको मना रहे हैं
टेढ़ा स्वभाव उनका
हम मानते गये है
सब कुछ सुझाव उनका
पर गालियां उन्हीं की दिन-रात खा रहे है
सब कुछ किया समर्पण
घर बार तक विसारा
लेकिन न ध्यान कुछ भी
आया उन्हें हमारा
खाते पुलाव वह है हम भात खा रहे हैं
विश्वास कर लिया है
हम मित्र बन गये है
हम लोग प्रेम रस में
सब भांति सन गये हैं
इस खेल-खेल में ही हम मात खा रहे हैं

२७--८--४७]

उन्यासी

(८ बहुत से खाट के खटमल

मुझे सोने न देते हैं, मिलन होने न देते हैं
उन्हें जब याद करता हूं निशा बरबाद करता हूं
लगा कर दांत यह अपने मुझे रोने न देते हैं
बहुत से खाट के खटमल

इधर करवट बदलता हूं, उधर करवट बदलता हूं
तनिक-सा सुख मगर मुझको किसी कोने न देते हैं
हमारी खाट के खटमल

कभी यह पीठ पर चलते, मचलते पेट पर है यह
बुलाऊं पास प्रियतम को कभी होने न देते हैं
पुरानी खाट के खटमल

अकेला मैं, पड़ी मेरी अकेली चारपाई है
कभी इस पर किसी को चैन से सोने न देते हैं
बड़े बदमाश हैं खटमल

पकड़ने आप जब जाते तुरत यह भाग हैं जाते
यह अपनी जान को बेकार यों खोने न देते हैं
बड़े चालाक हैं खटमल

१२–३–४८]

अस्सी

तुम्हारी याद में मोती प्रिये बिखरा रहा हूं

कहां से जल मिला इतना हृदय को
निरंतर नैन में आता चला है
किया इसने बहुत लज्जित प्रलय को
कहां का कूट हिमकर यह गला है

बहाकर अश्रु, सावन को प्रिये शरमा रहा हूं

नयन की हे प्रिये तुम पुत्तली हो
मनोहर और मंजुल और कोमल
कचौड़ी शुद्ध घी में ज्यों तली हो
तुम्हीं हो राह की मेरी सु-संबल

तुम्हीं को विश्व में मै देख जी बहला रहा हूं

नहीं सरिता बुझाती प्यास मेरी
हृदय को प्रेम रस की चाह होती
नहो व्यंजन-खगों का मैं अहेरी
न मेरी जीभ भोजन हेतु रोती

तुम्हारे द्वार पर मैं नित्य धक्के खा रहा

१५-४-४८]

•

इक्यासी

प्रभुजी रसना अगर न होती

कवि सम्मेलन में हम कैसे कविता मधुर सुनाते
कविता के पश्चात् मिठाई कैसे जमकर खाते
पुलिस भला फिर कैसे गाली खोज-खोज कर देती
गाड़ीवानों से पैसे वह किसके बल पर लेती
कैसे गान प्रशंसा का हम दरबारों में गाते
शाल-दुशाला और नगद हम पुरस्कार पा जाते
चिकनी-चिकनी जीभ चला कर बड़े-बड़ों के आगे
बड़े-बड़े ओहदे वह पाते जो थे सदा अभागे
तेरे बिना गरम भाषण नेता कैसे दे पाते
तेरे बिना दावतें कैसे बड़ी-बड़ी वह खाते
तेरे ही बल से रूठी प्रेमिका ढुलक आती है
तू निर्बल तो रूठ प्रेमिका तुरत चली जाती है
मित्रों की परोक्ष में कैसे निन्दा हम सब करते
आलोचना-सुमन कैसे लोगों के मुख से झरते
मोती कैसे घोंघा बनता, घोंघा कैसे मोती
प्रभुजी रसना अगर न होती

२५–५–४८]

०

बयासी

मैने जब सुर्ती थी खायो
उर में उठ आया झंझा-सा
ज्वार गले में आया
मानो मैने नहीं तमाखू,
कोई विष है खाया
ऐसा लगा चित्त में मानों मृत्यु अभी है आयी

सिर में कुछ भूकंप आ गया
लगी कांपने काया
मानो अपने संग
नर्तकी ने है मुझे नचाया
अथवा सीढ़ी समझ चढ़ गयी मेरे ऊपर बायी

लगा भय मुझे मानो
त्रिजटा बैठी मेरे ऊपर
अथवा किसी प्रेमिका ने
मारा है मुह पर थप्पर
जितना घी खाया था सब चरबी आंखों में छायी

हिचकी पर हिचकी आयी
आंखों में आया पानी
मैंने सोचा याद कर रही
मुझको यम की रानी

लगा लड़खड़ाने मैं जैसे टूटी हूई तिपाई

जी कुछ ऐसा हुआ पेट
मुंह को आने वाला है
मानो एक साथ पीली
ताड़ी, विजया, हाला है

अथवा चाय फेनाइल की है मुझको गयी पिलायी

उनके हाथों मिली पान में,
नहीं भला क्या करता
सुरती के प्रभाव से बढ़कर
उनसे भी मैं डरता

इधर हाल यह मेरी, हंसी उधर अधरों पर छायी

२७-६-४८]

तिरासी

गरमी का भगवान के यहां से टूटा है कोटा

हवा आग की लपटों-सी है
झुलस रहा तन सबका
मानव भी चूहे-सा
कमरे के कोने में दबका

और पसीना है शरीर पर जैसे गुड़ का चोटा

नाम वस्त्र का सुनकर
आ जाती है मुझको झांई
डर लगता है देख-देख कर
कुरते की परछांई

धोती भी उतार दी तन पर केवल रहा लंगोटा

खाने का क्रम बंद हुआ
अब पीना ही पीना है
शरबत, लस्सी, सोडा, लेमनेड
पर ही अब जीना है

पानी प्रतिपल पीता जाता हूं लोटे पर लोटा

जगती के प्राणी सब सूखे
सूख गयी हरियाली
सूख गयी सब सृष्टि जगत की
जो थी पानी वाली

रासभ का परिवार हुआ केवल मोटे पर मोटा

१५-१०-४८]

चौरासी

आओ संगिनी हम-तुम मिलकर एक नया संसार बनायें
एक बैलगाड़ी हम लायें, उसमें तुम अंजन लगवादो
बिना राड़क के, खेतों पर चलने वाली हम कार बनायें

हम महेश की मूर्ति बनाऐं, उसे सूट सीकर पहना दो
भावी संतति की पूजा का ऐसा ही आधार बनायें

आलू का भुर्ता हो उसमें तुम मुर्गी के अंडे घोलो
नवयुग में जलपान के लिये बढ़िया यह आहार बनायें

हिंदी के-उर्दू के उनमें, अंग्रेजी के टाइप मिलाकर
एक नयी भाषा गढ़ कर हम नया-नया अखबार बनायें

नव भारत के प्रेमो को है बहुत कठिन निर्वाह प्रेम का
उसके हित प्रत्येक गली में आओ एक मजार बनायें

नरगिस हो शैमरक हो और लवेंडर के भी सुमन मनोहर
और कमल भी एक जोड़ दें नव्य भव्य यह हार बनायें

शासक गांव-गांव से चुनकर लंदन का विधान दें उनको
तब सुचारू शासन हो अपना ऐसी जब सरकार बनायें

४-१-४९]

पचासी

" कोना-कोना मैंने ढूंढ़ा रहने को कहीं मकान नहीं
हो गयी भीड़ इतनी प्रियतम के दिल में भी स्थान नहीं
उड़कर तुम तक आ जाता, पंख नहीं है पास विमान नहीं
कोई सरकारी मित्र नहीं, है सरकारी वरदान नहीं
जीवन चरित्र पढ़कर होता जग में कोई विद्वान नहीं
नारी चरित्र अध्ययन करो बेपढ़े इसे कुछ ज्ञान नहीं
अधरों को लाल अगर करना है रगड़ो लिपइसटिक इन पर
गंदी आदत है बकरी-सी तुम प्रिये चबाओ पान नहीं
कल पांच बजे से आठ बजे तक खड़ा तुम्हारे द्वार रहा
इतना तो ध्यान रहे प्रियतम मैं प्रेमी हूं दरबान नहीं
किसका भय, मत संकोच करो यह हृदय-हृदय का सोदा है
यह तो चोरी की बात नहीं होगा इस पर चालान नहीं
यदि युग का साथी बनना है छोड़ो संध्या पूजा वंदन
इस युग की यही पुकार सखे भगवान नहीं भगवान नहीं
अधरों को लाल नही रंगा, है पाउडर नही कपोलों पर
छूरी तो तुम हो राजिस की है लेकिन उसपर शान नहीं
देवता चमकता चांदी का हो सोने की सुदर देवी
इसके अतिरिक्त किसी पर अब लग सकता बेढब ध्यान नहीं "

४-१-४६]

छियासी

आओ प्रिये मनालें हम तुम होली का त्योहार

मैं अबीर बढ़िया हूं लाया
टेसू भी जिससे शरमाया
पड़ी मास्को की है छाया
इसमें है अनुराग समाया

गोल गुलाबी गालों पर अरुणाई देगा ढार

तब कपोल होंगे मानिक-से
पुरस्कार होंगे ध्यानिक-से
बस में करलो इस बानिक-से
मुझको तो होंगे टानिक-से

सेमल का घूंघट डाले मानो होगी कचनार

होगा अरुण कपोल तुम्हारा
लोचन लाल अधर अंगारा
शशि मुख बालारुण-सा प्यारा
प्रेम बुभुक्षा का मैं मारा

उर-आनन में हनूमान सा लाओ में लूं डार

पड़ो न लज्जा के चक्कर में
तुम भी ले गुलाल निजकर में
मलो प्रिये मेरे मुंह भर में
बदल जांय दोनों बंदर में

सिद्ध डारविन की थ्योरी कर दें प्रियतम इस बार

खोलो प्रिय घूघट पट खोलो
मत संकोच करो झट खोलो
क्यों बनती हो नटखट खोलो
करो न अब 'इफ' या 'बट' खोलो

मल लें हम गुलाल मुखपर फिर कर लेना तकरार

मैं लोहा तुम चुंबक पत्थर
बनू चाय मैं, तुम हो शक्कर
मेरा गला बनो तुम मफ़लर
कोट बनू मै, तुम हो अस्तर

मिलन पर्व है एक बने हम दोनों का संसार

पर्व होलिका का आया है
हर्ष न जो मन में लाया है
मनुज नहीं, वह चौपाया है
हृदय अशोक, मगन काया है

रंग बिना सब सारहीन है ऋतु की यही पुकार

१४–३–४९]

सत्तासो

खालो प्रिये चार बीड़े यह है काशी का पान
अधरों को कर देगा यह क्षणभर में प्रिये प्रवाल
नयनों के डोरों को कर देगा मानिक-सा लाल
उर में मधुर लहरियों से उद्वेलित होगा प्रान
मुखसे मंद-मंद निकलेगी महक मनोहर प्यारी
बन जाओगी बात-बात में तुम केसर की क्यारी
कली खिली, भौरों को हो जायेगा यही गुमान
हरद्वार का गंगाजल हो, या ज़मज़म लासानी
इन बीड़ों के आगे हो जाते है सब बे पानी
लेकर इसे रीझ जाते है भक्तों पर भगवान
इसके आगे सभी वस्तुओं ने है मुंह की खायी
इसके ही भय सुधा नहीं वसुधा पर 'बेढब' आयी'
खाते हैं मग ही में इसको पंडित या विद्वान
संयम, नियम और यमसे मिल सकते हैं चारों फल
टानिक से मिल सकता है क्षय के रोगी को भी बल
किन्तु स्वर्ग में भी पाओगी नहीं इसे लो जान

२२--४--४६]

●

अट्ठासी

अरे समय क्या ठहर नहीं सकता तू क्षण भर
रुपयों से मैं भी अपनी थैली लेता भर
सुना बहुत जासूस लगे हैं मेरे पीछे
जनता के भी लगे इधर हैं नैन तिरीछे
कर लू कुछ प्रबंध अपना मैं, इतना तो कर

अभी-अभी नैनों की फिसलन गालों पर थी
प्रेमी के हाथों की बिछलन बालों पर थी
तनिक ठहर खेतों की क्यारी मत बनने दे
रजनी में चांदनी अभी तू मत तनने दे
क्षण भर रहने दे चितवन जो मद से तर थी

सूरज शशि नक्षत्र घड़ी सब का विनाश हो
बांधू धरती की गति ऐसा एक पाश हो
बड़ा चला है तू विजयी कहलाने वाला
सभी चराचर को तू वश में लाने वाला
करदूं तुझको भस्म शक्ति का यदि हुताश हो

कल तक जा तू ठहर भाव गिरने वाला है
भाग्य हमारा चांदी में फिरने वाला है
जल्दी क्या है, अगर ठहर जा कुछ ही घड़ियां
मेरे घर में बरस पड़ेगीं मानिक मणियां
आगे तो संकट का घन घिरने वाला है

तू है सचमुच 'काल' अरे तू कितना निर्दय
चिनगारी से कम क्षण तक मिलते प्रेमी द्वय
शायद तूने प्रेम किसी से नहीं किया है
अधरों का आसव जीवन में नहीं पिया है
तू कर सकता नहीं अश्व या खर में निर्णय

२४-७-४६]

नवासी

गरज-गरज सावन घन आये
देख-देख बादर की काली
उर पर मेरे बोझ कई मन आये
संध्या हुई शलभ मंडराये
जलकर थाली में पियाज के वे टुकड़े बन आये

सड़कों पर सरिता बह निकली
चिन्ता है बनिता को कैसे मेरा साजन आये

जैसे दमक रही है दामिनि
उसी भांति कुछ याद तुम्हारी तो दो छन आये

रिमझिम रिमझिम बरस रहा घन
ऐसा करो बरसकर भगवन वैसे धन आये

१०-६-५०]

नब्बे

मैं बड़ा भाग्य का खोटा
जन्म हुआ ऐसी नगरी में
जहां केन्द्र व्यापार का बना
है पीतल का लोटा

क्षीण हुआ गृहणी घबरायी—
लगे डाक्टर चिल्लाने जब हुआ
तनिक भी मोटा

इच्छा बहुत धनी बनने की
पर व्यापार करूं कैसे मैं
कहां मिलैगा चोटा

मेरी हँसी न भाती उनको
उन्हें चिकोटो अच्छी लगती—
मैं काटता चिकोटा

जब कविता के भाव जागते
पत्नीजी आती कहती
लाओ राशन का कोटा

२-१०-५०]

इकानबे

प्रियतम मै सोया तुम पालक
तुम हो जीवन शक्ति, तुम्हारे ही
कारण जीता हूं
मुझे पूछता कौन प्रिये
मैं तो लौका तीता हूं
मैं गरीब संपादक-सा प्रियतम तुम हो संचालक
नाम तुम्हारा ही लेकर
मैं तो उछला करता हूं
तुमने वह बल दिया
संखियां को कुचला करता हूं
मेरे उर की पीड़ा हरती तुम हो हृदय 'उछालक'
मैं तो शिष्य तुम्हारा हूं
जड़ता का महा कलापक
प्रणय-पाठशाला की प्रियतम
तुम क्रोधी अध्यापक
जिसने नहीं पाठ को घोखा मैं हूं वैसा बालक

१४-११-५२]

●

बाम्बे

निज अलकों के अंधकार में तुम कैसे छिप जाओगे
पुलिस बड़ी चालाक राज्य की तुम न कभी छिप पाओगे
आह चूम लो जिन चरणों को, चांप-चांप कर उन्हें नहीं
ऊंची एड़ी के जूतों के अंदर रखकर जाओ कहीं
बसुधा चरण चिन्ह-सी बनकर यहीं पड़ी रह जायेगी
पुरस्कार लिटरेचर का प्रियतम जिस दिन तू पायेगी
देख न लू इतनी ही तो है इच्छा लो सिर झुका हुआ
है अपराध अगर दो दो मुक्के क्यों कर है रुका हुआ
फिर कह दोगे पहचानो तो मैं हूं कौन बताओ तो
मै भी कह दूगा आओ रसगुल्ले थोड़े खाओ तो
सिहर भरे निज शिथिल मृदुल अंचल को अधरों से पकड़ो
लड़ना है तो मुझसे नही प्रियतमे जाओ चुनाव लड़ो
तूम हो कौन और मैं क्या हूं इसमें क्या है धरा सुनो
जाड़े की ऋतु आयी प्रियतम स्वेटर मेरे लिये बुनो

२६-१२-५२]

[प्रसाद जी के एक गीत की पैरेडी]

तिरानबे

नवयुग की दीपक माला है
वह स्नेह नहीं वह पात्र नहीं
वह जीवन या वह गात्र नहीं
बिजली का लट्टू नाच रहा
आंचल में दीप छिपाने का
अब जिसमें साधन मात्र नही
तारों-सा झिलमिल कहां रहा
यह तो फीका उजियाला है

वह अध्यापक वह क्षात्र नहीं
वह वेद नहीं वह शास्त्र नहीं
छद्मा है पद्मा बनी आज
पहला वह धन का धात्र नहीं
लक्ष्मी के बाहन घूम रहे
दुनिया का आज दिवाला है
नवयुग की दीपक माला है

दीपावली, १९५३]

चौरानबे

" खोपड़ी गंजी मनोहर चीज़ है
है लोहारों की निहाई की तरह
है नहीं रेखा न इसमें क्रीज़ है
सेफ़ में जिनके बहुत कुछ 'होर्ड' है
यह उन्हीं का साफ साइन बोर्ड है "

जो गली में ज्ञान के हैं मुड़ गये
घोंटते हैं पुस्तकों को जो सदा
बाल उनकी खोपड़ी से उड़गये
लोग कहते है बहुत विद्वान है
खोपड़ी पर बाल का न निशान है

एक टापू है बिना यह पेड़ का
रंग है इस ढंग का कुछ हो गया
बाल मानों मुड़ गया भेड़ का
अमित आभा चिकनई बे माप है
वारनिश मय टीक-टेबुल-टाप है

हाथ अपने आप जाता है उधर
खींचता जिस भांति चुम्बक जोर से
आ गया लोहा निकट उसके अगर
बैठ जाता हाथ तब तत्काल है
जिस तरह सम पर ध्रुपद का ताल है

इस तरह यह है चमकती खोपड़ी
देख सकते आप अपना रूप हैं
चांद पर है चांदनी मानो पड़ी
आइना इसको लगे हैं मानने
है बनाया हाथ से भगवान ने

बाल इनका कौन बांका कर सके
धर पकड़ में भी न आ सकते कभी
और चुंदी कौन बेढब धर सके
यह बड़प्पन की निशानी है महा
विश्व के सब पंडितों ने है कहा

२०--२--५४]

पंचानबे

सावन रिमझिम-रिमझिम आया
सड़कों पर रबड़ी-सा कुछ उसने चिकना फैलाया
रिक्शा वालों का दम भर में बढ़ने लगा किराया
ठंडी-ठंडी पुरवाई में घर पर बैठे-बैठे
गर्मा गर्म पकौड़ी बनवाया और उसको खाया।

लगा सोचने यह है ऋतु जो कालिदास को भायी
सेनापति ने, घनानंद ने इसपर कलम चलायी
अब के कवि ने इस ऋतु में कुछ नही सरसता पायी
न्यूमोनिया, ब्रानकाइटिस है पुरस्कार इस ऋतु का
सावन में घर में लेटे रहते वह ओढ़ रजाई।

वह युग था जब देख रंग बादल का मन ललचाता
जी में आता चलो चलें प्रियतम से जोड़ें नाता
बिजली की सुन कड़क हृदय में था आनन्द समाता
साहस कहां रहा निकलें आंधी-पानी में घर से
निकल नहीं सकते जब तक न मिलें मंगनी का छाता।

वह दिन बीते चार-चार दिन तक लगती थी झड़ियां
नहीं टूटती थी नभ से धरती तक जल की कड़ियां
पवन उड़ाता रहता निशिदिन पानी की फुलझड़ियां
शक्तिहीन हो गये इंद्र अब बहुत अवस्था होगी
या गप की इंद्राणी के संग पिरो रहे हैं लड़ियां।

बाढ़ आ गयी कहीं रेल भी तैर-तैर कर जाती
कहीं धान की क्यारी राजस्थानी उपमा पाती
कहीं बकस में धरी रह गयी सावन भर बरसाती
भूला क्या भूलें, कजली क्या गायें हम किस मन से
भूल रहीं है रेणु पवन में सड़कों पर मद माती।

नहीं-नहीं ऐसा मत कह कवि इंद्र रसिक हैं भारी
कभी रूठ जाते है जैसे सुदर युवती नारी
हुये मौज में तब लहरों में बहती धरती सारी
मनमाना मानव है मधवा क्यों न बने मनमाना
खेल रहा है गगन बीच वह जैसे चतुर मदारी।

वह देखो पूरब से बादल आता है लहराता
मानों है शृंगार, पताका गगन बीच फहराता
अलकतरे का सागर अथवा है उबाल यह खाता
भारत के जितने मजनू है धुआं आहका उनके
है घन श्याम के निकट मानों डेपुटेशन ले जाता।

बादल छाये हुआ अंधेरा कुछ-कुछ आशा आयो
खिली कृषक के उर की लतिका जो थी कुछ मुरझाई
चातक ने ऊपर ताका, बन की पत्ती लहरायी
टूट गया जादू क्षण भर में बरसी धूप धरा पर
उड़ा ले गयी बादल आयी बड़े जोर पुरवाई।

और उधर देखो नाटक है कहीं प्रलय का होता
धरती की छाती पर सागर अपना साज संजोता
जहां दौड़ते मेष और वृष, मीन लगाती गोता
गांव बह गये, बहे झोंपड़े बहा मनुज बेचारा
बहा-बहाकर आंसू कवि है निज नयनों को धोता।

३--९--५४]

●

छयानबे

इस जग की गति देख रह गया मैं पूरा भौचक्का
मानों किसी युवक के उर पर लगा नयन का चक्का।

पुत्र गुरू बन गया, पिता चेले का भी है चेला
कौन चरण माताके छूने का अब करै झमेला
यद्यपि हाथों में ले लेते चप्पल पत्नी तक का।

झूठ बोलना सीखो, यदि है बड़ा आदमी बनना
सत्य बोलना है इस जीवन में बस भूखों मरना
है महान उतना ही जो है जितना बड़ा उचक्का।

प्रेम वही जिसका समाज में होता रहे प्रदर्शन
वह सुदरता क्या न करै जो लोगों का आकर्षण
नहीं लाज कुछ सम्मुख चाहे काकी हो या कक्का।

आखें इनकी नहीं, घिसी गोली शीशे की जानो
छाती है प्रत्येक घोंसला टी-बी का सच मानो
मुख युवकों का मानो है अमरूद पुराना पक्का।

महिला मंडल को केवल नेता बनने की झक है
नहीं वीर माता या पत्नी, सीखा यही सबक है
जहां बीस के पार हुई मुख सूखा हुआ मुनक्का।

पढ़ना लिखना नहीं लाभकर, उसमें बस है घाटा
आप योग्य सबसे बढ़कर, यदि जेल आपने काटा
और नहीं तो खाते रहिये इधर-उधर बस धक्का।

लेखक बने, बने कवि, ऐसा पाप महान किया है
डींग मारते इस जगती को हमने ज्ञान-दिया है
क्या देगा दुनिया को जिसके यहां अभाव नमक का।

कालिदास राजा का अनुचर, तुलसी केवल ढोंगी
फ्रायड और मार्क्स अब पार लगाते अपनी डोंगी
जिधर देखिये उधर काम का होता धूम धड़क्का।

हिन्दू-मुसलिम दो मानव हैं क्यों न लड़ें आपस में
दो भाषाएं, दो चहरे, दो वेश और दो रस में
कहां पूर्व में काशी और कहां पश्चिम में मक्का। ”

५-२--५५]

सत्तानवे

प्रिये मैं समता का हूं वंदा

मेरे निकट बराबर सब हैं जितनी हैं महिलायें
हृदय खोलकर मिलता हूं मैं सबसे दायें बायें
सम करने को मै समाज का बना हुआ हूं रंदा

नहीं समझता जग में कुछ भी अपना और पराया
मेरे लिये समान सभी है धोती हो या साया
मेरे सम्मुख सेब ठीक वैसा है जैसा कंदा

देसी और विदेसी, यह दकियानूसी बातें हैं
विश्व प्रेम का भाव मिटाने की यह सब घातें हैं
आक्स-फोर्ड अपना ही जैसे है अपना नालंदा

भ्रम आखों का, वस्तु नहीं कुछ अपनो और पराई
अगर दृष्टि हो ठीक, एक है कुत्ता और बिलाई
जैसा वेतन का पैसा वैसा ही समझो चंदा

काकुल हो सिर के आगे या सिर के पीछे चोटी
अंतर क्या है हलवा हो या हो कटलट की बोंटी

६-१०-५५]

अट्ठानबे

आज हृदय का सौदा कविता के द्वारा होता है
आज वियोगी छंदों में बेबस होकर रोता है

अब न रहा युग चरणों पर उर को अर्पित करने का
अब है युग हाथों में चुपके-चुपके चेक धरने का

अब न वियोगी को नक्षत्रों के गिनने का श्रम है
जंपर, साड़ी, इयरिंग, चूड़ी यही प्रेम का क्रम है

सिनेमा से आरंभ हुआ फिर पत्र और फिर कविता
फिर तो प्रेम गगन में चमकें आप जिस तरह सविता

कश्मीरी केसर जैसे कालेज में यह है उगता
पैसे रूपी मोती को यह नव मराल है चुगता

शती बीसवीं में अब सबका रूप नया बदला है
प्रेमी का सब ढंग पुराना अब नितांत गदला है

३०-१२-५५]

निन्नान्यव

मेंढक तू कितना महान् है

जिसने महिमा राम-नाम को हम सबको बतलाई
जिसने लक्ष्मण के हाथों अबला को नाक कटाई
उस कवि ने तुझको बतलाया वेद पाठियों जैसा

कैसा तेरा मधुर गान है

मघवा की बरछी से बादल पर प्रहार जब होता
सिसक-सिसक कर नभ-मंडल में घन शावक जब रोता
नेताओं सा सदा उन्हें तू धीरज देता रहता

तू पंडित है ज्ञानवान है

रिमझिम रिमझिम बरस रहा हो पानी नील गगन से
किसी सुधाकर की स्मृति में हो बैठा युवक लगन से
तेरी मीठी बोली टीसों की लहरें ला देतीं

लाता उर में तू उफान है

तेरा है संगीत प्रेम का उर व्याकुल कर देता
तेरा स्वर कवियों के कलमों में स्याही भर देता
देख उछलते तुझे उछलने लगते प्रेमी जन भी

तू तो सचमुच शक्तिमान है

पानी में बैठा रहता निशि वासर घोर तपस्वी
दिग दिगन्त मे गूजा करती वाणी महा यशस्वी
तू सदेश जागरण का देता रहता सबको
जीवन का तू ही प्रमाण है

जलचर जनता का तू कवि है नमस्कार है तुझको
जन कवि की जानिब से ले यह पुरस्कार है तुझको
सुने या नही वाणी निज तू सबको सदा सुनाता
मेंढक तेरो तरुण तान है

जिसने तुझ पर लिखी न कविता वह भी कोई कवि है
बिना अर्थ का भारेवि है वह बिना ताप का रवि है
महाकाव्य क्या और गीत क्या मेंढक पर न लिखा जब
मगल तेरा ही बखान है

•

एक सौ

चश्मा सुशोभित नैनवाले बार-बार प्रणाम हो
इसलामवाले हो अगर तो बार-बार सलाम हो
पर्चा बिगड़ना और बनना आपके ही हाथ है
मेरा भविष्य बंधा हुआ अब आप के ही साथ है

हैं आप पर्दे में बहुत खोजा न पाया कुछ पता
मैं डाकखाने, रेलवे में भी बहुत था ताकता
अब आपको स्तोत्र द्वारा वन्दना हूं कर रहा
मैं क्या सभी जग जानता है आपकी महिमा महा

हम छात्र बन्दे और तुम उनके लिये अल्लाह हो
विद्यार्थियों की जीर्ण नौका के लिये मल्लाह हो
लग जाय डांड़ा लेखनी का और बेड़ा पार हो
गम्भीर चाहे मूर्खता का अमित पारावार हो

जब लाल रंगवाली कलम को बैठते हैं आप ले
जो कापियों पर दौड़ती जिस भांति कुत्ते बावले
विद्यार्थी समुदाय का कटता गला इस भांति है
मानो यहां पर आ गयी फिर फ्रान्सवाली क्रान्ति है

जब तक न हों हम पास जीवन का सहारा कुछ नहीं
कोई नहीं है पूछता जग में हमारा कुछ नहीं

हैं व्याह को भी पूछते सब लोग तुम क्या पास हो
कोई नहीं है पूछता द्विज हो कि तुम रैदास हो

" सरकार देशी या विदेशी हो यही है चाहती
कोई सनद हो पास में तब योग्य है वह मानती
है पास करना फेल करना खेल सारा आपका
आशीष पहुंचे आपको सब छात्रों के बाप का

हे हे परीक्षक आपकी हो जाय थोड़ी सी दया
समझू हमारे बाप ने निज बाप को, की है गया
इच्छुक नहीं धन धाम का, इच्छुक नही हूं स्वर्ग का
मैं पास होऊं लक्ष है इच्छुक नही अपवर्ग का

हे भाग्य निर्माता डिवीजन के प्रदाता हे प्रभो
हे प्रणय बन्धन के विधाता छात्र त्राता है विभो
घूमे कलम श्रीमान की छप जाय मेरा नाम भी
गुण आपके सौ पुश्त का गाऊं सवेरे शाम भी

कुछ मौज कुछ हड़ताल में ही समय था सारा कटा
कुछ फिल्म भी थे आ गये जिससे न पाठों को रटा
पुस्तक कभी जब खोलता आंखें न उनको बांचतीं
बस तारिकाएं फिल्म की ही पेज पर थीं नाचतीं

जो मास्टर ने नोट करवाये उन्हें मैंने रटा
इंम्पार्टेन्ट लिखा दिये थे मैं रहा उनपर डटा
गैस पेपरों का रात भर मैंने महान मनन किया
की आपने करुणा नहीं उनको न पेपर में दिया

दिन रात मैंने देवताओं को बड़े मन से भजा
तड़के सदा दर्शन किया फिर बन्दगी लायी बजा

ऐसा न कीजे भक्ति मेरी झूठ हो जाये सभी
ऐसा न हो भगवान पर से उठ चले विश्वास भी

हूं साठ पैंतालीस नम्बर मांगता भगवन् नहीं
मिल जायं तेंतिस मार्क आगे देख लूंगा फिर कभी
युग आज जनता का उन्हीं के साथ रहना चाहिये
सरिता डिवीजन थर्ड में ही आज बहना चाहिये

हैं दालदा से यह बनी कोमल कली सी हड्डियां
इससे न थीं मजनूं महोदय की मुलायम पसलियां
मत दीजिये अवसर कि पहिया रेल का इस पर चले
ऐसा न हो पाकस्थली में मीन के यह जा गले

हैं आप अविवाहित अगर हो जायं द्वन्द्व समास से
यदि हैं विवाहित आप पत्नी के नहीं हो दास से
दें आप जितने अंक उतनी आप को सन्तान हो
औ' फिल्म के स्टार जैसा आपका सम्मान हो ''